अपनी बात

अक्टूबर का महत्त्वपूर्ण महीना–वैसे तो अक्टूबर का महीना हर वर्ष ही आता है और अन्य महीनों की तरह बीत जाता है किन्तु इस वर्ष इस महीने का महत्त्व कुछ इसलिये बढ़ गया है क्योंकि अक्टूबर माह के प्रथम सप्ताह में दशहरा एवं अन्तिम सप्ताह में आलोक पर्व दिवाली मनाये गये। यह दोनों ही त्योहार मर्यादा पुरुषोत्तम राम से जुड़े है। दशहरा पर उन्होंने अहंकारी रावण पर विजय प्राप्त की थी एवं दीपावली पर अयोध्या वापस आये थे। इसी खुशी में अयोध्या वासियों ने अपनी नगरी को प्रकाश से आलोकित किया था।

यह संयोग ही कहा जायेगा कि अक्टूबर माह में अधिकतम महान पुरुषों एवं मनीषियों का जन्म हुआ। 2 अक्टूबर 1869 को सत्य एवं अहिंसा के मार्ग पर चल कर भारत को आजादी दिलाने वाले महात्मा गांधी एवं 2 अक्टूबर 1904 को जय जवान जय किसान की अलख जगाने वाले एवं आक्रमणकारी पाकिस्तान को धूल चटाने वाले भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म हुआ था। आजाद भारत में सम्पूर्ण क्रांति का आह्वान जिन्होंने किया एवं जिससे भयभीत होकर तानाशाह बन बैठने वाली इन्दिरा गांधी ने जिस जननायक को कारावास में डालकर देश में आपातकाल घोषित किया, उन जय प्रकाश नारायण का जन्म 11 अक्टूबर 1902 को हुआ था। मिसाइल मैन एवं स्वप्न दर्शी भारत के ऐसे राष्ट्रपति जो वैज्ञानिक, लेखक व्याख्याता सभी कुछ हैं डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 को हुआ था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् बिखरते हुए भारत को एक सूत्र में बांधने वाले सरदार पटेल 31 अक्टूबर 1875 को जन्मे थे।

1 अक्टूबर को पर्याप्त समय से अन्तर्राष्ट्रीय वृद्ध जन दिवस के रूप में मनाया जा रहा है। औसत आयु में वृद्धि एवं वृद्धों की बढ़ती जन संख्या के कारण इस दिवस का महत्त्व और भी बढ़ गया है।

ज्ञान प्रभा के इस अंक में इन सभी महान् पुरुषों एवं मनीषियों पर या तो अन्य लेखकों द्वारा लिखे गये लेख दिये गये हैं या स्वयं उनके द्वारा कहे गये अमूल्य वचनों या संक्षिप्त लेखों को उद्धर्त किया गया है।

वरिष्ठ नागरिक या वृद्ध भी समाज, राष्ट्र एवं विश्व में सक्रिय भूमिका निभा सकें अत: उनके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिये कुछ टिप्स भी इस अंक में संगठित हैं। आशा है वे हमारे बुजुर्गों के लिये

उपयोगी सिद्ध होंगे।

ज्ञान प्रभा के इस अंक का मुख्य विषय आधुनिकरण बनाम पाश्चात्यीकरण रखा गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आधुनिकता (modernity) के विचार का जन्म पश्चिम में हुआ है एवं औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा एवं सम्पन्नता इसके चार प्रमुख लक्षण बतलाये गये हैं। किन्तु पश्चिम के व्यक्तिवाद, भाषा, भूषा, परिवारों का विघटन जैसे लक्षणों को अपनायें बिना भी आधुनिक बना जा सकता है। जापान, चीन एवं किसी सीमा तक स्वयं भारत भी इसके उदाहरण हैं। तीन लेखों में इस विषय के विवेचन का प्रयास किया गया है। आशा है ये लेख इस संबंध में अनेक भ्रांतियाँ दूर कर सकेंगे एवं पाठक गण इनमें एक नई सोच पायेंगे।

अन्ना हजारे–16 अगस्त जब से अन्ना हजारे का अनशन प्रारम्भ हुआ। तब से उनके व्यक्तित्व, भ्रष्टाचार के विरुद्ध आन्दोलन एवं उस आन्दोलन के औचित्य अनौचित्य पर मीडिया में इतना कुछ लिखा एवं कहा जा चुका है कि इस पर कुछ नया या मौलिक लिखना अत्यंत कठिन है। किन्तु कुछ पाठकों ने आग्रह किया है कि ज्ञान प्रभा को भी इस ज्वंलत विषय पर कुछ न कुछ प्रकाश अवश्य डालना चाहिए। अब आन्दोलन अपने रामलीला मैदान दिल्ली वाले रूप में समाप्त हो चुका है एवं सरकार लोकपाल बिल पर तथा अन्ना टीम आन्दोलन की भावी रूपरेखा पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श कर रही है। अत: यह उचित होगा इस आन्दोलन से जुड़े उन पहलुओं पर विचार किया जाये जो केवल सामायिक महत्त्व के नहीं हैं अपितु जो हमारे समाज एवं राष्ट्र के भविष्य में भी प्रभावित करेंगे।

मेरे विचार से अन्ना एवं उनके आन्दोलन से जुड़े तीन बिन्दु ऐसे हैं जिनका शाश्वत महत्त्व है या जो दूरगामी प्रभाव डाल सकते हैं। वे हैं एक जन नेता के रूप में अन्ना का उदय, इस आन्दोलन की सफलता के कारक एवं आन्दोलन के वर्तमान स्वरूप का लोकतंत्र के भविष्य पर प्रभाव।

अन्ना हजारे में अनेक वे गुण नहीं हैं जो एक जन नेता के लिये आवश्यक समझे जाते हैं। वे एक कुशल वक्ता नहीं हैं एवं धारा प्रवाह भाषण देकर जनसमुदाय को उद्वेलित नहीं कर पाते हैं। उनका भाषा ज्ञान अत्यंत सीमित है। उन्हें मराठी पर अच्छा अधिकार है किन्तु भारत के बहुसंख्यक जन समुदाय की भाषा हिन्दी का ज्ञान सीमित है एवं प्रबुद्ध वर्ग की भाषा अंग्रेजी का उनका ज्ञान उससे भी अल्प हैं। वे एक सुदर्शन व्यक्तित्व के स्वामी नहीं है एवं वर्तमान में युवा नेताओं की धूम मची हुई है किन्तु वे 74 वर्ष के वृद्ध व्यक्ति हैं। उनकी तुलना महात्मा गांधी एवं लोक नायक जय प्रकाश नारायण से की जाती है किन्तु वे दोनों उच्च शिक्षित व्यक्ति थे एवं दोनों का अध्ययन

अत्यंत विस्तृत एवं गहन था। अन्ना यद्यपि चालीस वर्षों से भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं किन्तु उनका कार्यक्षेत्र महाराष्ट्र तक ही सीमित था। इससे पूर्व अखिल भारतीय स्तर पर उनका नाम कम ही लोग जानते थे।

किन्तु अन्ना की कुछ अन्य विशेषताएं हैं जो उन्हें पुस्तकों में लिखे नेतृत्व के गुणों से अलग हटकर एक पहचान दिलाती हैं। उनका सर्वश्रेष्ठ गुण है उनका पारदर्शी व्यक्तित्व। वे पिछले चालीस वर्षों से भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई लड़ रहे है। इसके लिये महाराष्ट्र के कुछ भ्रष्ट मंत्रियों ने उन्हें जेल भी भिजवाया किन्तु वे अडिग रहे। अन्त में उन मंत्रियों को ही जाना पड़ा। वे बिना निहित स्वार्थ के कार्य करते हुए दिखलाई पड़ते हैं। उनकी दूसरी विशेषता है उनका दृढ़ निश्चय एवं इसी कारण कभी कभी वे दुराग्रही भी दिखलाई पड़ते हैं। जब संसद ने एक स्वर से उनसे अनशन तोड़ने की अपील की एवं प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह तथा लोक सभा की अध्यक्षा मीरा कुमार ने भी व्यक्तिगतरूप से उनसे आग्रह किया तब भी उन्होंने अनशन अपनी ही शर्तों पर तोड़ा।

इन सबसे भी आगे बढ़कर नेतृत्व का उनमें जो महत्त्वपूर्ण गुण है वह है उनकी आध्यात्मिकता एवं जो भारतीय संदर्भ में और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाता है। आध्यात्मिक का अर्थ किसी धर्म विशेष या देवता में विश्वास नहीं है किन्तु ऐसी एक असीम सत्ता में अविचल आस्था है जो घोर आपत्काल में उन्हें सम्बल प्रदान करती है। संसार के समस्त जन नायक आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत रहे हैं एवं वे जन साधारण की यह शक्तियों को जाग्रत करके उन्हें भी आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। उनके नेतृत्व में स्वप्न एवं वास्तविकता का अन्तर मिट जाता है एवं साधारण व्यक्ति भी स्वप्नदर्शी बनकर इस स्वप्न को साकार करने के लिये मर मिटने को तत्पर हो जाता है। तिहाड़ जेल एवं रामलीला मैदान में चौबीसों घंटे जुटी रहने वाली लाखों की भीड़ अन्ना के इस गुण का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

सफलता के कारक–नेता कितना भी योग्य एवं स्वप्नदर्शी हो वह तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसके कार्यक्रम एवं आन्दोलन उपयुक्त समय पर प्रारम्भ न किये जायें। कहा जाता है कि नैपोलियन एवं चर्चिल जैसे नेता भी संभवत आज के युग के लिये उपयुक्त नहीं थे। भारत में जबसे आर्थिक सुधार प्रारम्भ हुए हैं अमीर एवं गरीब के बीच की खाई बढ़ी है। गरीब अधिक गरीब नहीं हुआ है किन्तु सम्पन्न मध्यम वर्ग की तादाद तेजी से बढ़ रही है। गरीब पर मंहगाई की मार भी अधिक पड़ रही है। किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि अन्ना आन्दोलन में सम्पन्न मध्यम वर्ग ही अधिक दिखलाई पड़ा एवं विपन्न निर्धन वर्ग की भागीदारी नहीं के

बराबर रही। दूसरे शिक्षित युवा वर्ग ने भी इस आन्दोलन में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया।

देश में शिक्षा का विस्तार हुआ है एवं यह शिक्षित वर्ग राजनैतिक नेताओं के लोक लुभावन नारों से भरमाकर अब उनका अन्धानुसरण करने को तैयार नहीं है। इस वर्ग में अब स्वयं सोचने की क्षमता का विकास हुआ है। राजनैतिक दल एवं राजनीतिज्ञ दोनों से ही यह वर्ग निराश एवं क्षुब्ध है। अधिकांश राजनैतिक दलों पर कुछ परिवारों का कब्जा है। भ्रष्टाचार ने नये कीर्तिमान स्थापित किये है। उसके इस आक्रोश एवं कुंठा को अभिव्यक्ति देने के लिये उसे किसी समुचित मंच एवं प्रखर किन्तु नि:स्वार्थ व्यक्तित्व की तलाश थी। अन्ना एवं उनके आन्दोलन में इस वर्ग को मानो मुंह मांगी मुराद मिल गई एवं वह तन, मन, धन से इसके पीछे चल पड़ा।

इस आन्दोलन में सबसे अधिक भागीदारी शिक्षित युवा वर्ग की रही। देश की 60% आबादी 25 वर्ष तक की आयु के युवाओं की है। इनमें से लाखों युवा उच्च व्यवसायिक एवं टैक्निकल शिक्षा प्राप्त हैं। कुछ युवाओं को अच्छे रोजगार भी मिल जाते हैं किन्तु बहु संख्यक अपने भविष्य को लेकर आंशकित एवं चिंतित है। सरकारी नौकरियों की भर्ती में भ्रष्टाचार का बोलबाला हैं। युवाओं का एक वर्ग कुछ नया रास्ता निकालने एवं परिवर्तन लाने के लिये बेचैन है। अन्ना का आन्दोलन इन युवाओं को अपने उज्ज्वल भविष्य एवं सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में कुछ नया कर दिखाने के अवसर के रूप में सामने आया है।

अन्ना हजारे स्वयं गहरी सूझबूझ वाले एवं तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न व्यक्ति हैं। इस समय विश्व में क्रांति का दौर चल रहा है। इस्लाम के मानने वाले अरब देश जो संसार में सर्वाधिक रूढ़िवादी एवं भूतकाल से बंधे रहने वाले समझे जाते थे उनमें एक के बाद एक खूनी क्रांतियों एवं अधिनायक बन बैठे भ्रष्ट शासकों का तख्ता पलट का दौर चल रहा है। सारा विश्व रोमांचित है एवं युवाओं में विद्रोह की लहर व्याप्त है। भारत में यद्यपि लोकतंत्र है किन्तु शासकों के भ्रष्टाचार एवं जन साधारण के सुख दुख के प्रति संवेदनहीनता ने जनमत को गहराई से आलोड़ित किया है। अन्ना एवं उनकी प्रबुद्ध टीम ने इस अवसर के उपयुक्तता को समझकर अपना आन्दोलन छेड़ा एवं इसका सकारात्मक लाभ उन्हें भरपूर मात्रा में मिला।

अन्ना आंदोलन के दूरगामी प्रभाव–भारतीय लोकतंत्र का भवन हमारे संविधान द्वारा प्रदत्त तीन स्तम्भों व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्याय पालिका पर टिका हुआ है। व्यवस्थापिका में संसद के दोनों सदन लोक-सभा एवं राज्य-सभा शामिल है एवं इनका कार्य कानून बनाना है। इन सदनों के सदस्य बहुमत के आधार पर चुनकर आते हैं एवं भारत की जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। कानून लाने का

अधिकार संसद का ही है एवं कोई भी संविधान से इतर तरीका अपना कर इससे यह अधिकार नहीं छीना जाना चाहिये। ऐसे तरीकों में हिंसक विद्रोह, सत्याग्रह, अनशन, हड़ताल, असहयोग सभी कुछ शामिल है। संविधान निर्मात्री सभा में भाषण देते हुए डा. अम्बेडकर ने कहा था कि कोई कितना भी महान व्यक्ति क्यों न हो संवैधानिक संस्थाओं की इन शक्तियों को उसे नहीं सौंपा जाना चाहिए। ऐसा करना अराजकता को निमंत्रण देना होगा।

इसमें कोई संदेह नहीं कि हाल के वर्षों में संसद की गरिमा का ह्रास हुआ है। डेढ़ सौ से अधिक संसद सदस्यों पर अपराधिक मुकदमें चल रहे हैं एवं मंत्री स्तर के लोग भी जेलों में बंद हैं। अत: जनता अपने प्रतिनिधियों की अपेक्षा एक बाहरी व्यक्ति को अधिक विश्वसनीय मानने को विवश है। भारत में हमेशा भक्ति मार्ग को ज्ञान मार्ग की अपेक्षा तरजीह दी जाती रही है। भक्ति मार्ग का अर्थ है श्रद्धा एवं कभी कभी अंध श्रद्धा। खतरा यही है कि हमारा लोकतंत्र कहीं भीड़ तंत्र में न बदल जाये। कल अन्ना के स्थान पर कोई अधिनायकवादी वृत्ति का व्यक्ति इन संवैधानिक संस्थाओं के शक्ति विहीन बना सकता है।

अत: जहां हमारी संसद को जन भावनाओं के प्रति अधिक संवेदनशील तथा संसद सदस्यों को अधिक उच्च कोटि के चरित्र वाला होना पड़ेगा वहां इस प्रकार के आन्दोलन छेड़ने वालों को भी सावधानी बरतनी होगी कि हमारी संवैधानिक व्यवस्था नष्ट होकर लोकतंत्र खतरे में न पड़ जाये।

ज्ञान प्रभा के पाठकों को आलोक पर्व
दीपावली की शुभ कामनाऐं

Editor's Reflections

Moderate Exercise is Key to Good Health

"A man's health can be judged by which he takes two at a time, pills or stairs"

I go for morning walk to a park and see people walking so fast and moving so vigorously that it becomes a torture for them rather than a happy and healthy morning walk. The sports industry is encouraging joggings and marathons to push the sales of the sports outfits manufactured by them because their survival depends on the volume of sales. This is a multi billion rupee industry and advertisements are splashed on T.V. Screens and in newspaper columns. Falsehood need advertisements while truth needs no loud shouting and media blitzkrieg.

A morning walk and an evening walk as well is not meant only to get the benefits of exercise, but to be one with nature. We enjoy the company of trees, flowers and birds and also get the opportunity to greet and smile at familiar faces of daily walkers, which is the best way to start a day or to retire for the night long rest.

In America a study was made on some veteran male athletes. An unexpectedly high prevalence of myocardial fibrosis was observed in almost 50% of them. In another study some rats were put under long-term intensive exercise. The heart of such rats showed major changes in not only its structure but in its capacity to trigger dangerous life threatening irregular rhythms which might suddenly kill the rats.

In a recent study, researchers at Queen's University in Kingston-England found that incidental physical activity such as jiggling legs, taking short walks in office and shaking the body etc. can help improve fitness levels of obese people who spend their days slumped in a chair. The researches claimed that just 30 minutes of light exercise are enough to help the heart and lungs, and cut the risk of cardiovas-

cular disease. They claim that if we do a little bit more work around the house or walk down to talk to a friend, we can benefit our health in the long term.

Ayurveda recommends hard work as the only exercise to remain healthy but in today's sedentary living style we need a daily mild to moderate exerise to keep ourselves fit. Hard work is a blessing for our poor folk and they need no exercise at all.

The human body has a wise doctor inside who gives signals when we overdo exercise. The signals are breathlessness, aches and pains. We should never ignore them.

Our daily habit of taking a walk or some other exercise should be an enjoyable routine and not drudgery.

Holistic Health

The holistic approach takes the broadest possible view of illness and disease, identifying multiple causes (both internal and external), and offering multi-dimensional "healing," as opposed to specific "cures." Why does one person get colds or infections more easily than another, or at different times? Can we render ourselves more hardy and disease-resistant before medical intervention is necessary and more resilient when illness does occur?

The holistic view says yes. For 80% of our modern health complaints-the lifestyle, stress, and behavioral disorders-natural, holistic self-care methods are a viable alternative to drug-dependence, side effects, and expensive, hitech intervention. The fundamental premise is that your body knows how to be well, given the proper support.

Holy Wisdom

तत्व ज्ञान

वृथा वृष्टिः समुद्रेषु, वृथा तृप्तेषु भोजनम्।
वृथा दानं धनाढ्येषु, वृथा दीपो दिवाऽपिच॥

What is the use of raining in the oceans? What is the use of feeding one who is satiated full with food, what is the use of donation to the rich and what is the use of lighting lamp in daytime? (All in vain, give proper thing to the needy who really needs).

- Panchatantra

❖ ❖ ❖ ❖

यथा यथा हि पुरुषः कल्याणे कुरुते मनः।
तथा तथाऽस्य सर्वेऽर्थाः सिध्यन्ते नात्रसंशयः॥

There is no doubt in this matter that the more a man directs his mind to auspicious activities, the more so all his desires are fulfilled.

- Viduraneeti

❖ ❖ ❖ ❖

Government

I can retain neither respect nor affection for a Government which has been moving from wrong to wrong in order to defend its immorality.

- Mahatma Gandhi

कतिपय शाखाओं की असंतुलित कार्य प्रणाली

– एस. के. वधवा
राष्ट्रीय महामंत्री–भा.वि.प.

शाखा स्तर पर शाखाओं के ढांचे को दो पक्षों में विभाजित किया जा सकता है–संगठन पक्ष एवं कार्यपक्ष। संगठन पक्ष में समस्त सदस्य दायित्वधारी एवं कार्यकारिणी के सदस्य सम्मिलित होते हैं। कार्यपक्ष में शाखा द्वारा चलाये जा रहे संस्कार एवं सेवा से संबंधित प्रकल्य एवं कार्यक्रम आते हैं। सामान्यत: शाखा की कार्यकारिणी की तथा सामान्य बैठकें प्रत्येक माह में होनी चाहियें। कार्यकारिणी की बैठक में कार्यक्रम तैयार किये जाने चाहियें एवं सामान्य बैठक में उनकी सूचना देते हुए उन पर चर्चा की जानी चाहिये। तात्पर्य यह है कि कार्यकारिणी समिति की बैठकें एवं सामान्य बैठकें, कार्यक्रमों की योजना एवं उनका क्रियान्वन नियमित एवं संतुलित रूप से चलना चाहिए।

किन्तु शाखा स्तर पर कभी–कभी संगठन पक्ष एवं कार्यपक्ष में असंतुलन की स्थिति बन जाती है। शाखा की कार्यकारिणी समिति एवं सामान्य बैठकें नियमित रूप से होती हैं। किन्तु कार्य योजनाऐं बहुत कम या बिल्कुल ही नहीं बनतीं। परिणाम यह होता है कि संगठन पक्ष मजबूत बना रहता है किन्तु कार्य पक्ष कमजोर पड़ जाता है। कभी–कभी एक विपरीत स्थिति भी पैदा होती है। दो या तीन पदाधिकारी अपनी मर्ज़ी से कुछ कार्यक्रम बना लेते है एवं उन्हें क्रियान्वित भी कर डालते हैं। इन हालात में शाखा की कार्यकारिणी समिति के सदस्यों एवं सामान्य सदस्यों को भी यह शिकायत रहती है कि कार्यक्रम बनाने एवं उनके क्रियान्वन में उनकी कोई भूमिका नहीं है एवं पदाधिकारियों का एक गुट शाखा का संचालन कर रहा है।

परिषद् का कार्य प्रत्येक स्तर पर लोकतांत्रिक ढंग से चलता है। संगठन की बैठकें भी हों, कार्यक्रम भी बनें एवं उनका क्रियान्वन इस ढंग से किया जाये कि अधिकतम सदस्यों को लगे कि उनकी सहमति एवं भागीदारी उसमें है। केवल बैठकें करना एवं काम कुछ न करना या कुछेक सदस्यों द्वारा मनमाने कार्यक्रम बनाकर उन्हें क्रियान्वित करना दोनों ही स्थितियों में संगठन पक्ष एवं कार्यपक्ष में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है जो शाखा के समुचित संचालन के लिये हानिकारक है। ऐसी स्थिति से बचा जाना चाहिये।

(5)

आधुनिकीकरण बनाम पाश्चात्यीकरण

– सुरेश चन्द्र

जब हम किसी समाज, परिवार या व्यक्ति को आधुनिक कहकर पुकारते हैं तो प्राय: ही हमारा आशय उसके पाश्चात्य रंग में रंगे होने से होता है। यही नहीं जब किसी होटल, खेल परिसर, सड़क, हवाई अड्डा या अन्य किसी स्थान को हम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का कहते हैं तो भी हमारा आशय किसी पाश्चात्य देश विशेषकर अमेरिका, इंगलैंड या यूरोप के किसी देश में बने उसी प्रकार की वस्तु के समान होने से होता है। आधुनिकीकरण एवं पाश्चात्यीकरण प्राय: ही समानार्थ हो गये हैं। हमारा रहन–सहन, भाषा, वस्त्र, भोजन करने का तरीका तब तक आधुनिक कहलाने का हकदार नहीं है जब तक वह पश्चिम के ढांचे में न ढल गया हो। इसी पृष्ठभूमि में इस प्रश्न पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है कि वास्तव में आधुनिकता क्या है एवं क्या पश्चिम की नकल किये बिना भी हम आधुनिक हो सकते हैं।

मोटे तौर पर आधुनिकीकरण का अर्थ शहरीकरण एवं औद्योगिकीकरण से होता है। जो समाज आधुनिकीकरण की ओर बढ़ता है उसमें कृषि पर निर्भरता कम हो जाती है एवं उद्योग तथा व्यापार की प्रगति होती है। उद्योग एवं व्यापार बड़ी संख्या में मनुष्यों को एक ही स्थान पर एकत्र होकर निवास करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। स्वाभाविक रूप से आधुनिकीकरण से शहरीकरण को प्रोत्साहन मिलता है अत: विशाल नगर अस्तित्व में आते हैं। उद्योगों के लिये शिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है अत: समाज में शिक्षा का प्रसार होता है।

आधुनिकीकरण का मुख्य आधार आर्थिक है। यह प्रक्रिया एक नई प्रकार की मानसिकता को जन्म देती है। व्यक्ति परिवर्तन चाहने लगता है, उसमें एक निश्चित एवं पूर्व निर्धारित भविष्य की इच्छा कम हो जाती है, वह एक अनिश्चित एवं उज्जवल भविष्य चाहता है। आर्थिक गतिविधियां खेतों से हट कर कारखानों की ओर उन्मुख हो जाती हैं एवं आबादी गांवों से शहरों की ओर चल पड़ती है। मनुष्य के जीवन के हर पहलु में परिवर्तन आने लगता है। उसका ज्ञान, राजनैतिक ढ़ांचा, प्रकृति के साथ उसके संबंध एवं यहां तक कि मानव के अस्तित्व के विषय में उसकी धारणा भी बदल जाती है।

आधुनिकीकरण से केवल औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण जैसे भौतिक परिवर्तन ही नहीं होते अपितु मानसिक परिवर्तन भी होते हैं एवं मनुष्य के सोचने का

तरीका भी बदल जाता है। आधुनिक युग में परिवार एवं समाज गौण हो जाते हैं एवं व्यक्ति का महत्त्व बढ़ जाता है। व्यक्ति सोचने लगता है कि उसका स्वयं का व्यक्तित्व सबसे महत्त्वपूर्ण है एवं वास्तव में परिवार एवं समाज उस जैसे स्वतंत्र, पृथक एवं अपना अस्तित्व रखने वाले व्यक्तियों का एक समूह है। पश्चिम में परिवार की अवधारणा भारत या चीन जैसे देशों से बिल्कुल अलग है। वहां एकल परिवार होते हैं एवं विवाह दो व्यक्तियों के मध्य उनकी पसन्द के अनुसार होता है। भारत और चीन में संयुक्त परिवार अब भी मौजूद हैं यद्यपि यह प्रचलन अब कम हो चला है। विवाह यहां अब भी दो परिवारों के बीच संबंध को माना जाता है। अत: भौतिक रूप से औद्योगीकरण, शहरीकरण अधिक धन एवं शिक्षा को आधुनिकीकरण का आधार माना जा सकता है। राजनैतिक क्षेत्र में लोकतांत्रिक व्यवस्था भी आधुनिकीकरण का एक अंग है क्योंकि औद्योगिकरण का जन्म 17वीं तथा 18वीं शताब्दी के यूरोप में हुआ एवं अमेरिका ने उसे नई ऊंचाईयां दी अत: पूर्व के देशों ने आधुनिकीकरण के उपरोक्त सोपानों को अपनाने के साथ ही वहां के खान-पान, रीति-रिवाज एवं जीवन पद्धति को भी अपना लिया। कभी-कभी तो पाश्चात्य देशों का अन्धानुकरण ही आधुनिकीकरण माना जाने लगा। किन्तु कुछ देश ऐसे अवश्य निकले जिन्होंने औद्योगीकीकरण, नगरीकरण, शिक्षा के प्रचार आदि को तो अपनाया किन्तु पश्चिम की अन्धाधुन्ध नकल करने से इंकार कर दिया। जापान इन देशों में सर्वोपरि है।

इतिहास गवाह है कि शक्तिशाली सम्पन्न एवं विजेता देश जब दूसरे राष्ट्रों पर विजय प्राप्त करते हैं तब वे केवल उनके धन्य धान्य एवं सम्पदा पर ही अधिकार नहीं करते अपितु उनके विचारों, व्यवहारों, भाषा, खान-पान एवं रीति रिवाज पर भी अपनी छाप छोड़ देते हैं। यूरोप तथा इंगलैण्ड का साम्राज्यवादी अभियान यद्यपि 17वीं शताब्दी में आरम्भ हो गया था किन्तु 19वीं शताब्दी के मध्य में इसने एशिया, अफ्रीका एवं अमेरिका के अधिकतम भू भाग पर अपना आधिपत्य जमा लिया। ईसाई धर्म एवं उच्च कोटि की सभ्यता एवं गोरे रंग के दर्प के साथ इन आक्रमणकारियों के पास अत्यन्त शक्तिशाली जल एवं थल सेना भी थी जिसने विश्व की आधी से अधिक आबादी को रौंद डाला एवं अपने अधीन कर लिया। इन देशों ने एशिया एवं अफ्रीका से अत्यन्त सस्ते दामों पर कच्चे माल का आयात किया एवं उससे तरह-तरह की उपयोक्ता वस्तुऐं बनाकर इन देशों को निर्यात की। परिणाम स्वरूप ये अधीनस्थ देश निर्धन होते चले गये एवं इंग्लैण्ड तथा यूरोप में सम्पन्नता बढ़ती गई।

प्राय: अमेरिका तथा यूरोप की आधुनिकता को एक ही पलड़े में रख दिया जाता है किन्तु वास्तव में दोनों में भिन्नता हैं। सन् 1607 में यूरोप के निवासी अमेरिका में आये थे। इस शताब्दी के अन्त में अमेरिका की कुल आबादी लगभग चालीस लाख

थी जिनमें सात लाख अफ्रीका से लाये गये नीग्रो दास थे जिन्हें अमेरिकी समाज का अंग नहीं माना जाता था। आधुनिकीकरण के बावजूद भी यूरोप में रहने वाले लोग अपने पुराने रीति-रिवाजों, प्रथाओं एवं सामन्ती समाज की मानसिकता से बंधे हुए थे। अमेरिका में आकर बसने वाले लोग भूतकाल के समस्त बंधनों से मुक्त थे। वे एक कोरे कागज पर अपने वर्तमान की गाथा लिख रहे थे। वे उत्साह एवं आशा से परिपूर्ण थे तथा एक उज्जवल भविष्य उनके सामने था। उनकी इस नई इबारत में भूतकाल की कोई झलक नहीं थी। अत: उनकी आधुनिकता यूरोप से भिन्न थी एवं बंधन रहित थी।

एशिया की आधुनिकता–जब यूरोप या अमेरिका का कोई टूरिस्ट टोक्यो, शंघाई, कुवालालंपुर, बीजिंग या नई दिल्ली (कुछ क्षेत्रों) में पहुंचता होगा तो उसके मुख से बरबस ही निकल जाता होगा-कितना आधुनिक है एवं कितना हमारी तरह है। पश्चिम से आने वाले अधिकांश टूरिस्ट, व्यवसायी एवं उद्योगपति जब एशिया के देशों की यात्रा पर होते हैं तो अपना अधिकांश समय ऐसे स्थानों पर बिताना पसन्द करते हैं जो उनके अपने देश की भांति हैं। स्वभाविक रूप से इन स्थानों पर उन्हें एक अपनापन महसूस होता है। किन्तु एशिया एवं पश्चिम की आधुनिकता के अन्तर को समझने का यह सही तरीका नहीं है। दोनों की वास्तविक आधुनिकता उनके हार्डवेयर (वाह्य रूप) में नहीं है अपितु उनके साफ्टवेयर (आन्तरिक दृश्य) में बसी हुई है। बड़े-बड़े मॉल, मल्टीप्लेक्स, शानदार होटल, चौड़ी बढ़िया सड़कें ये सब तो प्रत्येक देश का हार्डवेयर है। उनका साफ्टवेयर तो उनके रीति रिवाज़, जीवन मूल्य, पारिवारिक संबंध, भाषा एवं किसी सीमा तक वेश-भूषा है। आधुनिकता की वास्तविकता जानने के लिये इन्हें जानना आवश्यक है जो कि एक कठिन काम है।

पाश्चात्य तथा पूर्वी आधुनिकता का एक बहुत बड़ा अन्तर उनका वर्तमान के प्रति दृष्टिकोण हैं, पश्चिम के लोग अपने भूतकाल की ओर कभी भी ललचाई हुई दृष्टि से नहीं देखते। शायद ही वे कभी ऐसा सोचते हैं कि उनका भूतकाल अत्यन्त गौरवशाली था। उसे फिर से वापस आना चाहिए। इसके विपरीत एशिया का वर्तमान, भूत एवं भविष्य का एक मिश्रण है। जापान, चीन एवं भारत भी अपने भूतकाल को अत्यन्त गौरवशाली मानते हैं एवं उसके पुन: वापस लाने की कामना करते हैं। वे भविष्य के लिये भी उतने ही उत्साहित हैं। उनका वर्तमान भूतकाल की महानता एवं भविष्य के सपनों का एक मिला जुला रूप हैं।

पश्चिम एवं पूर्व में एक और बहुत बड़ा अन्तर पारिवारिक संबंधों का है। पश्चिम में व्यक्ति अपने में ही सबसे महत्त्वपूर्ण है तथा परिवार का स्थान दूसरा है। परिवार की कल्पना भी पति, पत्नी एवं अपने बच्चों तक सीमित है। भाई, बहिन,

चाचा, ताऊ, मौसा एवं इनके बच्चे सब Extended Family कहलाते है। उन्हें अंकल, आंटी एवं कज़िन जैसे शब्दों में समेट दिया गया है। पुत्र वधु का सास ससुर के साथ रहना जेल में रहने के समान है। जापान, चीन एवं भारत पर पश्चिम के इस ट्रैंड का प्रभाव हुआ है किन्तु इन तीनों ही देशों में संयुक्त परिवार प्रथा बहुत कुछ शेष है। जापान में तो समस्त समाज को ही परिवार मानते हैं एवं जापान के सम्राट इस परिवार के प्रमुख हैं। यहां तक की कम्पनियों एवं कारखानों में भी परिवार की यह भावना व्याप्त रहती है एवं सबसे सीनियर कर्मचारी को सम्मान एवं सुविधाऐं मिलती हैं। यही कारण है कि जापान के कारखानों में शायद ही कभी हड़ताल होती है। पश्चिम में अधिक आयु अक्षमता का प्रतीक मानी जाती है एवं वरिष्ठ नागरिकों को रिटायर कर दिया जाता है। चीन में साम्यवादी क्रांति के बावजूद परिवार की पुरातन परम्परा जीवित है। वहां वृद्ध माता-पिता अब भी पुत्र के साथ रहते हैं। भारत में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार आधुनिकीकरण के बावजूद 50% से अधिक परिवारों को यहां संयुक्त परिवारों की श्रेणी में रखा जा सकता है। अपने माता-पिता, सगे भाई बहिन के अतिरिक्त दूसरे रिश्तों के भाई बहिन के यहां आना जाना एवं मान्यता देने की प्रथा यहां आज भी जीवित है।

एक लम्बे इतिहास एवं उच्चकोटि की समृद्ध प्राचीन संस्कृति का उत्तराधिकारी होने का एक विशिष्ट प्रभाव एशिया की मानसिकता पर दृष्टिगोचर होता है। अमेरिकावासियों की कोई पृष्ठभूमि या इतिहास नहीं है अत: वे वर्तमान में ही अपनी पहचान की तलाश में रहते हैं। वे सदैव दूसरों से अपनी तुलना करते रहते हैं, उससे आगे बढ़ने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। जापान, चीन, भारत एवं एशिया के अन्य देशों के लोग अपनी प्राचीन संस्कृति एवं परम्परा को गर्व भरी दृष्टि से देखते हैं, उसे ही अपनी पहचान समझते हैं।

पूर्व के देशों का किसी सीमा तक पश्चिमीकरण हुआ है इसके कुछ और भी संकेत हैं। हैं भाषा, शारीरिक सौष्ठव, पोशाक, भोजन एवं राजनैतिक ढांचा। इन सब बिन्दुओं पर अलग-अलग कुछ विस्तार से विचार किया जायेगा।

भाषा–विश्व में चीनी एवं मंडारिन भाषा 105 करोड़, अंग्रेजी 51 करोड़ एवं हिन्दी 50 करोड़ लोगों द्वारा बोली जाती है। लगभग 13 करोड़ लोग जापानी एवं 8 करोड़ लोग कोरियन बोलते हैं। जापान तथा भारत में भी अंग्रेजी स्लोगन वाली टी शर्ट पहने नवयुवक मिल जाते हैं। विज्ञापनों में भी अंग्रेजी स्लोगन प्राय: ही मिलते हैं। जापान में अंग्रेजी अध्यापकों की भरमार है किन्तु फर्राटेदार अंग्रेजी अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। इसके विपरीत चीन में नवयुवकों में अंग्रेजी पढ़ने का उत्साह

अपने चरम पर है। वहां अंग्रेजी पढ़ाने वाले अध्यापक हर कहीं, यहां तक की खुले मैदानों में छात्रों को अंग्रेजी पढ़ाते मिल जायेंगे। किन्तु फिर भी वहां अंग्रेजी द्वितीय भाषा है। आम आदमी चीनी एवं मंडारिन भाषा बोलना पसंद करता है। अंग्रेजी कुछ पढ़े लिखे, सम्भ्रान्त लोगों तक ही सीमित है।

भारत में अंग्रेजी की स्थिति से हम सब परिचित हैं। भारत सौ वर्षों से भी अधिक अंग्रेजों के अधीन रहा अत: अंग्रेजी का प्रसार स्वाभाविक था। 1990 के पश्चात् आई.टी. युग का भारत में पदार्पण हुआ एवं अब इस क्षेत्र में पूरे विश्व में भारतीय अपना एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। अत: आजादी के बाद भी अंग्रेजी का प्रसार बढ़ा है। एक अन्य तथ्य भी अंग्रेजी के पक्ष में जाता है। भारत एक बहु भाषी देश है अत: यहां अंग्रेजी भाषा शिक्षित लोगों की सम्पर्क भाषा भी बन गई है। छोटे नगरों तथा सामान्य लोगों में अब भी हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषाऐं ही प्रयोग की जाती हैं। अंग्रेजी पढ़ने से इसे जानने वालों में भारतीयता कम हुई है या इसका पश्चिमीकरण हो गया है ऐसा कहना उचित नहीं होगा। अंग्रेजी के अनेक विद्वान भारतीय वेदों, उपनिषेदों एवं ग्रन्थों के भी उद्भट विद्वान हो चुके हैं। महर्षि अरविन्द, डॉ. राधा कृष्णन इत्यादि इसी श्रेणी में आते हैं।

(7)

वेशभूषा एवं शारीरिक सुन्दरता–जापान, चीन, कोरिया, हांगकांग इत्यादि में महिलाओं तथा पुरुषों की वेशभूषा पूर्णतया पश्चिमी ढ़ांचे में ढल गई है। स्त्री तथा पुरुष दोनों ही कोट, पैंट, जीन्स, टी शर्ट्स, स्कर्ट्स, ब्लाउज इत्यादि पहनते हैं। जापान में महिलाऐं अपनी प्राचीन किमोनो कुछ विशेष अवसरों जैसे त्योहार, विवाह इत्यादि के अवसर पर ही पहनती हैं। चीन में भी प्राचीन पोशाकें कुछ विशेष अवसरों पर ही पहनी जाती हैं।

भारत इस विषय में अन्य एशियाई देशों से भिन्न है। यहां शिक्षित, धनी एवं सम्भ्रान्त पुरुषों में एवं वह भी नगरों में रहने वालों में ही शर्ट, पैंट, जीन्स इत्यादि का अधिक प्रचलन हुआ है। विशेषकर विद्यार्थी वर्ग में ये खूब प्रचलन है। गांवों में कुर्ता, पायजामा, धोती अब भी पहनी जाती है। कुछ बड़े नगर जैसे बंगलौर, दिल्ली, मुम्बई इत्यादि इस अंग्रेजी वेशभूषा के केन्द्र बनकर उभरे हैं। यदि छात्राओं को छोड़ दें तो महिलाओं को अंग्रेजी वस्त्रों की यह बयार अछूता छोड़कर निकल गई है। भारतीय महिलाएं साड़ी तथा सलवार कुर्ते में सजी हुई दिखलाई पड़ती हैं। पुरुषों के मामले में भी दक्षिण भारत के पुरुष अपनी परंपरागत पोशाक मुंडु एवं कमीज में अधिक दिखाई पड़ेंगे।

वेशभूषा के अतिरिक्त शारीरिक सौष्ठव के प्रतिमानों पर भी पश्चिम का प्रभाव

पड़ा है। यूरोपियन-जिन्हें काकेशियन भी कहा जाता है का कद ऊंचा, रंग गोरा आंखे भूरी और बड़ी एवं नाक ऊंची होती है। लगभग सम्पूर्ण एशिया में गोरा, दिखने की चाह बढ़ी है। जापानी एवं चीनी भी गोरे दिखने के इच्छुक रहते हैं। वैसे भी उनमें काला रंग खेतों में काम करने एवं श्रमिक होने का परिचायक है। गोरा रंग संभ्रान्त वर्ग की विशेषता समझी जाती है।

भारत भी पश्चिमीकरण के इस संकेतक में पीछे नहीं है। गोरा रंग सुन्दरता का प्रतीक माना जाता है। गोरा बना देने वाली क्रीमों की भरमार है। फिल्मी हीरो एवं अब तो हीरोइन बनने के लिये लम्बा कद जरूरी हैं यद्यपि राम एवं कृष्ण दोनों ही सांवले थे एवं उन्हें अवतार माना गया है। किन्तु गोरे रंग की ललक हर एक में है। भविष्य में एक अन्तर आता दिखलाई पड़ रहा है। दक्षिण भारत के श्याम वर्ण लोग आई. टी., इंजिनियरिंग एवं अंग्रेजी बोलने पढ़ने में गोरे उत्तर भारतीयों से आगे निकल रहे हैं। तब हम काले रंग की श्रेष्ठता को स्वीकार करने को बाध्य हो सकते हैं।

राजनैतिक शक्ति एवं शासन प्रणाली–जैसा कि कहा जा चुका है पश्चिम का व्यक्ति व्यक्तिवादी है एवं उनकी स्वयं की पहचान उसके लिए सर्वोपरि है। वह सर्वप्रथम अपनी स्वतंत्रता चाहता है। अत: सरकार एवं शासन प्रणाली उसकी इसी आकांक्षा की पूर्ति का एक साधन मात्र है। पश्चिम में व्यक्ति उसे ही अपना मत देता है जो उसके लिए उपयोगी है। पूर्व में इसके विपरीत व्यक्ति गौण है एवं परिवार सर्वोपरि है। पूर्व में परिवार का मुखिया सब प्रकार से आदर के योग्य होता है चाहे उसकी उपयोगिता उतनी न भी हो। जापान में यद्यपि प्रजातंत्र है एवं सरकारें बदलती रहती हैं किन्तु सम्राट का सम्मान परिवार प्रमुख के नाते अक्षुण्ण रहता है। चीन की जनता को एक व्यक्ति एवं एक पार्टी का राज ही रास आता है। संसार के परिवर्तनों का उस पर कोई प्रभाव नहीं है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि लोकतंत्र की स्थापना हो चुकी है एवं देशभर में अनेक क्षेत्रीय एवं कुछेक राष्ट्रीय दल कार्य कर रहे हैं किन्तु इन सभी पर पारिवारिक प्रणाली की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है। क्षेत्रीय दल लगभग सभी एक परिवार के नेतृत्व में कार्य कर रहे हैं एवं लोग उन्हें अपना मत एवं समर्थन भी प्रदान कर रहे हैं। केन्द्र में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात कुछ समय को छोड़कर एक ही पार्टी की सरकार बनती आ रही है। इस दल में भी कुछ अपवादों को छोड़कर एक ही परिवार के लोग पार्टी अध्यक्ष एवं प्रधान मंत्री बनते आ रहे है। अत: हमारे यहां आधुनिकीकरण तो हुआ किन्तु प्राचीनता की छाप अब भी अवशेष है।

आधुनिकता का स्वदेशीकरण–भारतवर्ष एवं अन्य एशियाई देशों में भी

(8)

आधुनिकीकरण तीव्र गति से चल रहा है किन्तु अब इन देशों का दृष्टिकोण पश्चिमी तौर तरीकों के प्रति बदल गया है। अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दी यूरोप, इंगलैण्ड एवं अमेरिका की थी किन्तु अब एशिया के महत्त्व का युग प्रारम्भ हो गया है। इन देशों में सम्पन्नता बढ़ी है। अब हिन्दू या बौद्ध होना पिछड़ेपन का परिचायक नहीं है। अब आधुनिकता कोई थोपी हुई चीज नहीं रह गई है बल्कि एशिया के देश उसे अपनी शर्तो पर स्वीकार कर रहे हैं। प्राय: ही पश्चिम के रीति रिवाजों एवं पूर्वी चलन की खिचड़ी देखने को मिल जाती है। पैट, शर्ट के साथ पायजामा, कुर्ता, पिज़्ज़ा के साथ इडली एवं अंग्रेजी संगीत के साथ भारतीय संगीत भी आदर का स्थान पाता है। अनेक अत्याधुनिक परिवारों में बच्चों के नाम संस्कृत शास्त्रों के आधार पर रखे जा रहे हैं। केवल इतना ही नहीं पश्चिम से जो चीजें हमने उधार ली है उनमें हम उनसे आगे बढ़ गये हैं। क्रिकेट का जन्म इंगलैण्ड में हुआ था किन्तु आज भारत विश्व कप जीत कर इस खेल में शीर्ष स्थान पर है। और भी अनेक खेलों में भरातीय खिलाड़ी पश्चिम को चुनौती दे रहे हैं। आई.टी., मैनेजमेंट, इंजिनियरिंग, चिकित्सा इत्यादि के क्षेत्र में वे देश भारत एवं अन्य एशियाई देशों का लोहा मानने लगे हैं।

वास्तव में अब आधुनिकीकरण एक नये रूप में परिभाषित हो रहा है। पश्चिम में प्रारम्भ होने वाले जिस विज्ञान, टैक्नोलोजी एवं प्रबन्धन व्यवस्था को हमने अपनाया है वह अब उन देशों की बपौती नहीं रह गई है। भारत एवं अन्य एशियाई देश अब पिछड़ेपन के प्रतीक नहीं रह गये हैं। अब एक नई आधुनिकता का विकास हो रहा है। नवोदित ये देश अब आत्म विश्वास से भरे हुए हैं।

''प्रगतिशील'', ''विकसित'', एवं **''सभ्य''** जैसे शब्द अब केवल पश्चिम देशों पर लागू नहीं होता। भारत सहित पूर्व के देश भी अब इस पंक्ति में खड़े होने के हकदार बन चले हैं।

अपनी प्राचीन परम्पराओं एवं संस्कृति में अत्यधिक आस्था रखने वाले लोग प्राय: ही आधुनिकता एवं पश्चिमीकरण को एक ही समझने की भूल कर बैठते हैं। वे आशंकित हो जाते हैं कि पश्चिमी ही यह आंधी हमारे समस्त मूल्यों एवं आदर्शों को उड़ाकर ले जायेगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि पश्चिम का अन्धानुकरण हमें अन्धकार की ओर धकेल सकता है। किन्तु पश्चिम में जो कुछ अच्छा है उसे अपनाने की आवश्यकता है। हमें अपने नीर क्षीर विवेक से काम लेना होगा। न तो अपनी रूढ़ियों से चिपके रहने की जिद और न ही पश्चिम की हर चीज की भौंड़ी नकल। इसमें ही हमारा कल्याण है। आधुनिकीकरण हमें नया विश्वास एवं शक्ति देगा एवं हमारे उज्ज्वल भविष्य का पथ प्रशस्त करेगा। ❑

पाश्चात्यीकरण के बिना आधुनिकीकरण

– आर० के० श्रीवास्तव

सुनने में उलटा लगता है। विश्वास नहीं होता। आधुनिकीकरण, वह भी पाश्चात्यीकरण के बिना कैसे सम्भव हो सकता है? यह विचारधारा उस चिन्तन का परिणाम है, जो आज के भारत के बुद्धिजीवी की प्रवृत्ति का निर्माण कर रही है। उनके लिए पश्चिम की प्रत्येक वस्तु मानदण्ड है। उनके लिए शेक्सपियर ग्रेट ब्रिटेन का कालिदास नहीं, कालिदास भारत का शेक्सपियर है। गीता एक महान ग्रंथ इसलिए है कि एमर्सन ने ऐसा कहा था। वे कौटिल्य की तुलना मैकियावली से एवं भारतीय विधि निर्माताओं की तुलना पश्चिम के संविधान विशेषज्ञों से करना अनुचित समझते हैं। उनके हिसाब से हमारा कोई सिद्धान्त उस समय तक प्रामाणिक नहीं हो सकता जब तक पश्चिम का कोई विद्वान ऐसा होने का प्रमाण न दे दे।

आज आधुनिकीरण एवं पाश्चात्यीकरण प्राय: समानार्थी हो गये हैं। जब हम किसी व्यक्ति, परिवार या समाज को आधुनिक कहकर पुकारते हैं, तो प्राय: हमारा आश्रय उसके पाश्चात्य रंग में रंगे होने से होता है। यही नहीं, जब हम किसी सड़क, खेल परिसर, होटल या हवाई अड्डे को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का कहते हैं तो हमारा आशय इंगलैण्ड, यूरोप व अमेरिका आदि पश्चिमी देश में बने उसी प्रकार की वस्तु के समान होने से होता है। हमारा रहन-सहन, भाषा, वस्त्र, भोजन करने का तरीका तब तक आधुनिक कहलाने का हकदार नहीं है, जब तक वह पश्चिम के ढांचे में न ढल गया है। इन परिस्थितियों में आधुनिकता का सही अर्थ समझने की आवश्यकता है, जिससे इस प्रश्न का उत्तर मिल सके कि क्या पश्चिम की नकल किये बिना भी हम आधुनिक हो सकते हैं।

आधुनिकता की व्याख्या देशकाल के संदर्भ के बिना सम्भव नहीं। दूसरे शब्दों में किसी समय किसी विशिष्ट क्षेत्र के निवासियों के चिन्तन की दिशा ही आधुनिकता की परिभाषा तय करती है। स्पष्ट है अमेरिका, इंगलैण्ड एवं यूरोप आदि पश्चिमी देशों की विचारधारा के अनुसार आधुनिकीकरण के लिए जिन क्रिया कलापों का अपनाना आवश्यक है, वे सब भारत के लिए न तो आवश्यक हैं और न उचित ही क्योंकि हमारा इतिहास, हमारा दर्शन एवं हमारी जीवन पद्धति उनसे भिन्न है। इसी प्रकार आधुनिकीकरण की जो अवधारणा हमारी आज है वह प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों

(9)

की नहीं थी। मानव स्वभाव सदा उन्नति की ओर अग्रसर होने का प्रयास करता आया है। अत: यद्यपि आधुनिकता की कोई सर्वमान्य, सनातन परिभाषा नहीं हो सकती तथापि यह कहा जा सकता है कि **आधुनिकीकरण मानव का वह प्रयास है जिसके द्वारा वह अपना सर्वांगीण विकास करते हुए अधिक से अधिक सुख, शान्ति एवं आनन्द की प्राप्ति करने में सफलता प्राप्त करता है।**

विश्व के किसी भी भाग के निवासियों के सुख, शान्ति तथा आनन्द की अनुभूति में कोई अन्तर नहीं है किन्तु उसकी प्राप्ति के मार्ग अलग अलग हैं। परिणाम स्वरूप एक देश के निवासियों ने आधुनिक बनने का जो मार्ग अपनाया है, जरूरी नहीं कि दूसरे के लिए वही सही हो। किसी भी देश द्वारा किये जाने वाले ये प्रयास उसके इतिहास, सामाजिक संरचना, व्यापार, राजनैतिक ढांचे एवं चिन्तन की दिशा पर निर्भर होते हैं।

इस परिपेक्ष्य में पाश्चात्यीकरण एवं आधुनिकीकरण का वास्तविक अर्थ समझने की आवश्यकता है। पाश्चचात्यीकरण पश्चिमी देशों के खान-पान, रीति-रिवाज एवं जीवन पद्धति को उसी रूप में अपनाने के सिवा और कुछ भी नहीं है। वहां आदर्श जीवन उसे माना जाता है जिसमें अधिक से अधिक भौतिक सुख के साधनों का उपयोग हो। आधुनिकीकरण के उनके अपने तरीके हैं। इसे ठीक प्रकार से समझने के लिए इस बात पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है कि इन देशों ने केवल भौतिक सुख के साधनों को ही प्रमुखता क्यों दी? इसके लिए वहां की ऐतिहासिक, पारिवारिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करना आवश्यक होगा।

पश्चिमी देशों का भूतकाल गौरवशाली नहीं रहा। इन देशों के लोग भूतकाल की ओर कभी भी ललचाई दृष्टि से नहीं देखते और न ही उसके फिर से वापस आने की आकांक्षा रखते हैं। वे वर्तमान को ही अधिक से अधिक उन्नत एवं गौरवशाली बनाना चाहते थे। इस प्रक्रिया में यूरोप के निवासी अपने पुराने रीति-रिवाजों, प्रथाओं एवं सामन्ती समाज की मानसिकता से कुछ अंशों तक बंधे हुए थे किन्तु अमेरिकावासी भूतकाल के इन बंधनों से भी मुक्त थे। सन् 1607 में यूरोप के निवासी अमेरिका में आये थे। इस शताब्दी के अन्त में वहां की जनसंख्या चालीस लाख थी जिसमें सात लाख अफ्रीका के नीग्रो दास थे। इस प्रकार शेष तेंतीस लाख यूरोप के सम्पन्न एवं समर्थ लोग थे।

विकास के इस प्रयास में वहां व्यक्ति की महत्ता सर्वोपरि थी। परिवार व समाज के बंधनों से मुक्त होकर उसने अथक परिश्रम किया। परिणाम निकला सर्वांगीण भौतिक विकास के रूप में। विज्ञान के नये-नये आविष्कार हुए, उद्योग धंधों की वृद्धि हुई एवं मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने वाले अनेकों उपकरणों का निर्माण हो गया। विकास की यह सारी प्रक्रिया व्यक्ति के अपने प्रयासों का परिणाम थी, अत: व्यक्ति

महत्त्वपूर्ण हो गया। उसे समाज एवं परिवार के नियम बन्धन मालूम पड़ने लगे। वह सोचने लगा कि उसका स्वयं का व्यक्तित्व सबसे महत्त्वपूर्ण है तथा वास्तव में परिवार एवं समाज उस जैसे स्वतंत्र, पृथक एवं अपना अस्तित्व रखने वाले व्यक्तियों का एक समूह है। इसके दूरगामी परिणाम हुए। व्यक्ति का हित समाज एवं परिवार के हित से ऊंचा माना जाने लगा। व्यक्ति अपने अधिकार की दुहाई देकर परिवार के बन्धन तोड़ने लगा। बड़ों के प्रति आदर की भावना एवं माता-पिता के अनुशासन को पिछड़ेपन की निशानी माना जाने लगा। बच्चों को यह अधिकार मिल गया कि यदि माता-पिता उनकी इच्छा का आदर न करें तो वे पुलिस से शिकायत करके उन्हें कटघरे में खड़ा कर सकें। पश्चिमी देशों में संयुक्त परिवार की कल्पना तो दूर की बात है, अब परिवार भी टूटने लगे हैं। अधिकार, अपनी इच्छा तथा रुचि की भावना ने विवाह की संस्था को भी ध्वस्त करना आरम्भ कर दिया है। लोग विवाह के बन्धन में नहीं बंधना चाहते वे लिव-इन-रिलेशनशिप में विश्वास करने लगे हैं। अब तो समलैंगिक विवाह के पैरोकार भी पैदा हो गये हैं। कुछ देशों ने इन सम्बन्धों को कानूनी मान्यता भी प्रदान करना आरम्भ कर दिया है। यह सब कुछ हो रहा है अत्याधुनिक बनने के लिए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि पश्चिमी देशों के आधुनिकीकरण में व्यक्ति एवं वस्तु ही महत्त्वपूर्ण है। उनकी विशेषता है उनका भौतिकवादी होना। उन्होंने एक मूल्य प्रणाली विकसित की है जिसकी धुरी है उपभोक्तावाद व जिसकी सहज परिणति है स्वेच्छाचारिता। इस विचारधारा के अनुसार पदार्थ आधारभूत वस्तु है एवं मन, धर्म, संस्कृति, नैतिकता आदि बाह्य संरचना है। इनका विश्वास है कि आर्थिक विकास के कारण पदार्थ में वृद्धि होने पर इन बाह्य संरचनाओं में स्वयमेव तदनुसार परिवर्तन हो जायेगा। पश्चिम की दूसरी विशेषता है मानव केन्द्रवाद। इसका परिणाम हुआ स्वार्थ केन्द्रित व्यक्तिवाद। व्यक्ति के उपभोग एवं उसके सुख सुविधाओं की वस्तुओं में वृद्धि ही इस संस्कृति का एकमात्र उद्देश्य है। इसमें कोई शक नहीं कि इस प्रवृत्ति के कारण पश्चिम में पिछली शताब्दी में उपभोग की वस्तुओं में प्रत्येक क्षेत्र में कल्पनातीत वृद्धि हुई है। यह बात भी सही है कि उपभोग की वस्तुओं में वृद्धि एवं विकास का लाभ सारे संसार को मिला है।

यहां प्रश्न यह है कि क्या आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया से मूल उद्देश्य की पूर्ति हुई है एवं मानव के सुख, शान्ति एवं आनन्द में वृद्धि हुई है? यदि नहीं तो इसका कारण क्या है? राष्ट्र की सबसे छोटी इकाई परिवार है। व्यक्ति की महत्ता अधिक होने के कारण परिवार भी टूटने लगे हैं। पति पत्नी में सामन्जस्य नहीं रह गया। तलाक के मामले बढ़े हैं। तलाक के बाद पुनः विवाह भी होते हैं। एक अध्ययन से यह ज्ञात हुआ है कि तलाकशुदा एवं पुनर्विवाह करने वाले व्यक्तियों में मानसिक तनाव की वृद्धि

हुई है। पश्चिमी आधुनिकीकरण के पक्षधर तलाक को इस आधार पर तर्क युक्त एवं आवश्यक मानते हैं कि जब दो व्यक्तियों में मतभेद बढ़ जाता है तो जबरन साथ-साथ रहने की अपेक्षा तलाक लेकर अलग हो जाना उचित है। वे इस सचाई से अनभिज्ञ हैं कि कोई भी दो व्यक्ति एक विचारधारा के नहीं हो सकते। जापान के सम्राट यामा तो के भूतपूर्व मंत्री ओ-चो-सान के परिवार में एक हजार सदस्य थे एवं उनके बीच एकता का अटूट सम्बन्ध था। सम्राट मंत्री के घर स्वयम् गये व इसका कारण पूछा। ओ-चो-सान वृद्धावस्था के कारण अधिक बात नहीं कर पाते थे। उन्होंने एक कागज में एक ही शब्द सहनशीलता, सहनशीलता, सहनशीलता लिखा व सम्राट की ओर बढ़ा दिया। सम्राट को उत्तर मिल गया। परस्पर सामञ्जस्थ स्थापित करने एवं शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का यही मूल मंत्र है।

आधुनिक बनने की होड़ में पश्चिम के स्वार्थ केन्द्रित व्यक्तिवाद ने स्वतंत्रता के नाम पर खुलेपन को भी बढ़ावा दिया है। अप्राकृतिक यौन सम्बन्धों को कानूनी जामा पहनाया जा रहा है। सेक्स की एक आयु होती है किन्तु उसके पहले ही बच्चों को सेक्स एजूकेशन दी जा ही है। लंदन की एक स्वास्थ्य संस्था द्वारा ग्यारह वर्ष तक के लड़कों को निःशुल्क निरोध दिये जा रहे हैं। भारत में भी एक राज्य मंत्री ने एक बार कहा था कि कालेजों में निःशुल्क निरोध बंटवाये जाएं। यह जानकर आश्चर्य होगा कि अमेरिका में महिलाओं के प्रति हिंसा भारत से अधिक हैं। वहां 46 सेकेंड में एक महिला का बलात्कार होता है जबकि भारत में यह संख्या 27 मिनट में एक बार की है। अमेरिका में अब 'डेट रेप' के मामले भी बढ़ रहे हैं। नाबालिक लड़कियाँ गर्भ धारण का अनुभव प्राप्त करने का निर्णय ले रही हैं। वहां प्रति वर्ष 26 लाख लड़कियों घर से भाग जाती हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका में 15 से 24 वर्ष तक के 80 प्रतिशत युवा खतरनाक यौन रोगों की गिरफ्त में हैं। यह व्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं, स्वेच्छाचारिता है। वहां जीवन का लक्ष्य भोगवाद है। भोगवाद का चरम यौन भोग है। वे मुक्त यौन सुख को आधुनिकता और सामाजिक नियमन को पिछड़ापन बताते हैं। हाब्स, लाक और रूसो सहित सभी विद्वानों के अनुसार समाज का जन्म संयम और व्यवस्था देने के लिए हुआ। ऐसा नहीं कि अमेरिका इससे परेशान नहीं है। अमेरिका सायकेट्री एसोसिएशन के अनुसार ऐसे लोग सामान्य से 6 गुना ज्यादा मानसिक अवसादग्रस्त होते हैं।

पश्चिम में आधुनिकीकरण के इस स्वरूप ने मानव जीवन को स्वार्थ, असहनशीलता, संवेदनहीनता, मानसिक तनाव एवं अशान्ति की ओर ढकेला है। उपभोग के अतिरेक के कारण अशान्ति है। पश्चिमी देश भी अब इसका अनुभव करने

लगे हैं। पूंजीवाद के एक महत्त्वपूर्ण संरक्षक जान मेनार्ड कीन्स ने कहा है, ''ह्रासमान अन्तर्राष्ट्रीय किन्तु व्यक्तिवादी पूंजीवाद जिसके हाथों में हमने अपने आपको युद्ध के पश्चात् पाया, सफल नहीं हुआ। यह बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं, न्याय संगत नहीं, सद्गुणयुक्त नहीं और इससे प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।'' हमें इससे अरुचि है और हमने इसका तिरस्कार करना आरम्भ कर दिया है।

पश्चिम के आधुनिकीकरण से वांछित परिणाम न मिलने का कारण है असंतुलित प्रयास। हमारे यहां कहा गया है 'अति सर्वत्र वर्जयेत' यदि सुविधाओं की अधिकता से ही सुख शान्ति मिलती तो पश्चिम के वृद्धाश्रमों में रहने वाले लोग असंतुष्ट व दुखी न रहते। वे प्रतीक्षा करते रहते हैं कि उनका कोई अपना आकर उनकी कुशलता पूछे। अब समय आ गया है कि हम सुख के साधन जुटाने के साथ-साथ अपने जीवन में सत्य, अहिंसा, दया, संवेदना, सहयोग, त्याग, नैतिकता आदि गुणों का विकास करें क्योंकि इसी मार्ग से हम सही अर्थ में आधुनिक हो सकते हैं। आधुनिक बनने के लिए पाश्चात्यीकरण अनावश्यक ही नहीं अवांछित भी है। ❑

सम्पर्क F सहयोग F संस्कार F सेवा F समर्पण

...और पढ़ायें तथा भेंट करें

ज्ञान प्रभा

...RABHA
...ARTERLY)

त्रैमासिक ज्ञान प्रभा के आजीवन सदस्य बनें।

सहयोग राशि वार्षिक 100/-

आजीवन 1500

त्रैमासिक 24

आगामी अंक
युग दृष्टा स्वामी विवेकानंद

(11)

Modernization Vs Westernization

- O. P. Sexena

For over last two centuries we have been living in a world dominated by West, be it in the field of industrialization, science, technology, medical science, human development, education, culture, sports, language, democratic values or politics. The Western norms became symbol of modernity and anything not in conformity with it was considered backward. There has been an assumption that there is only one way of being modern which involves adoption of western style institutions, culture, constoms and values. So resounding was the West's success that it became difficult to distinguish between modernization and Westernization. For most of the 20th century the United States was not only the most powerful nation on earth, it also embodied the ultimate modernity and virtually all the countries around the world sought to emulate it. With the down slide of America's economy, rising debt and increasing unemployment and emergence of China, South, Korea, Brazil, India on economic development index modernity is no langer embodied by western powers. A new world order led by mostly non-western giants appears to be a reality.

It would be ineresting to trace the history of modernity Europe is said to be the birth place of modernity and it happened in the mid eighteenth century when industrialization and economic take off was the decisive moment for modernity. With this the focus of economic activity shifted from the field to the factory and that of residence from the countryside is the cities. This broughtforth trans formation of living standards, family structure, economic conditions, skills and knowledge, self organizations and political representation. As its tentacles stretched around the globe during the course of two centuries after 1750, so its ideas, institutions, values, religion, langnages, ideologies and customs left a huge and indelible imprint on the rest of the world. Modernity and Europe became inseperable. They appeared synonymous.

The United States became the new metaphor for modernity. The U.S. has a history of about four centuries. In 1607 Europeans were the first to setlle in U.S. By 1790 the total population of the U.S. was 3929000 of whom the majority were British, German and Dutch. Successive waves of European settlers brought with them the values, beliefs, customs, skills knowledge and culture with which they had grown up. The nation became vibrant with a powerful sense of optimism and a restless commitment to change. In 1820, the U.S. economy accounted for a mere 1.8% of world's GDP compared with 5.2% and 3.9% for the U.K. and Germany respectively. By 1914, the U.S. had pulled well ahead with a share of 18.3% compared with 8.2% for the U.K. and 8.7% for German y. Despite the damage wrought by two world wars U.S. became the first truly globle power. In 1950 U.S. share of world's GDP was 27.3% compared with 6.5% for the UK and 5% for Germany and 26.2% for the whole of Western Europe. The dollar was enshrined as the world's currency. A new constellation of globlal institutions, like the IMF, the world Bank and GATT gave expression to the U.S. economy hegemony, while its miltary superiority based on air power and sea power far exceeded anything that had priviously been seen. With the collapse of Soviet Bloc U.S. became the undisputed superpower not only militarily but in the field of every concievable branch of human development.

Modernity is made possible by industrialization and until the middle of 20th century this was a condition which was exclusive to a small part of the world. As a result, the West enjoyed a de facto monopoly of modernity with Japan the only exception. After 1905 Japan became a powerful competitor to the West and by 1980 it had establised itself as the second largest economy behind U.S. Japan always sought to assert its western credentials. It is outwardly western but inwardly Japanese. By any standards it was phenomanilly successful in an attempt to emulate the West. It served as an infuential economic model when the East Asian Tigers begain their economic take off from the late 1950's. While attaining high standards of living and high GDP growth Japan remained highly distinctive, both culturally and socially. If Britain was Europe's Pioneer in modernity so Japan has been Asia's.

(12)

Although we are witnessing the rise of a growing number of developing countries, China is by far the most important country economically. It is bearer and drivcr of the new world, with which it enjoys an increaoing hegemonic relationship. China is very different from South Korea and Tiawan. Unlike the later, it has never been a vassal state of the U.S. China is the most populous state in the world. It has embarked upon stratagic planning producing consumer goods meeting the requirement of practically every country of the world. The markets are flooded with Chinese consumer goods, be it toys, shoes, electronic and electrical goods. In India during Diwali and Holi celebration it is Chinese goods which have captured the market. The effects of China's economic rise are being felt around the world, mostly in the falling price of many consumer products. One of the consequences of China's growing economic importance has been that the great majority of countries in the region have become more closely aligned with it. The evidence of the growing chinese presence in Africa is every where. There are estimated to be over 900 large and medium sized Chinese companies now operating in Africa. China is seeking much closer relationship with Middle East which is responsible for nearly 40% of world crude oil with Saudi Arabia's share around 12% and Iran 7%. Over the last few years it has employed various stratagies to try to secure its oil supplies from the region. Chinese oil companies have tried to gain rights to invest and develop oil fields in the region. With the collapse of Soviet Union, Russia become a pale shadow of its former self with only half of its former GDP. Meanwhile China embarked on its reform programme and enjoyed nonstop double digit growth tilting the balance of power.

The rise of China, Brazil, South Korea, Singapore, Tiawan, Malaysia, India and many other developing countries mark a huge shift in the balance of economic power. Economic prosperity serves to transform the self confidence and self-image of societies, there by enabling them to protect their potential and cultural values more widely.

The impact of Westernisation in the Eastern countries is limited. This can be better understood if an analysis is made with regard to prevelant languages, dresses, food and powerpolitics. East Asia is

home to almost half of the top twenty mostly spoken languages in the world today. The spread of English Since 1945, driven by the global pre-eminence of the U.S., has not affected the popularity of the main East Asian languages in their homeland. The only East Asian countries in which English has acquired a central role are Hongkong, Singapore and Malaysia. This is because, as in India, English has acted as a useful common language in a highly multiracial and multilingual environment. Mandarin is widely spoken language in the world. But the vast majority of Mandarin speaking people live in China. As China becomes the economic centre of East Asia, there is no reason why East Asian countries may not adopt Mandarin as the second language.

The influence of the West in respect of dress worn by both men and women in East Asian countries is highly Westernized. The traditional dresses are almost confined to ceremonial occasions like weddings etc. However in India besides western outfit traditional dresses like sari, blouze, salwar kaneej, kurta payajama are much in common. It is fashionable to cite the spread of McDonald's, Star Bucks, Kentucky Fried Chicken and Pizza Huts in East and South Asia as a sign of growing Westernisation. The new western fast food has have become status symbol for the new middle class, who finds them as an expression of western life style.

Western Style democracy is the hallmark of western countries. Many of East countries have democracy which is distinctly different from the Western style democracy. Japan is regarded as democratic because it has parliamentary form of democracy where members are elected. But the system works entirely differently from those in the West-China is known for communist government where the sense of indvidual authority and identity is conepicuously absent. The highly distinctive characterstic of East Asian politics may be rooted in history.

The fact that the U.S. had been living well beyond its means and relying on China credit underlines both the falliability of American prosperity and the shift in the centre of economic gravity from U.S. to China. For the first time in the history of America its rating has suffered a set back signalling begining of setting down of its

(13)

supremacy. China, the largest holder of U.S. debt said that Washington needed to cure its addiction to debt and live with in its means just hours after S&P downgraded American's long term debt. Anand Mahindra, Vice Chairmen and MD Mahindra and Mahindra "I see the U.S. downgrade and indeed, the continued slow down as signs of a structural shift of the epicenter of economic activties towards the East." The rate of unemployment in U.S. is between 9-10% but in the case of youth it has reached to 24%. The U.S. has ceased to be a major manufacturer and largescale exporter of manufactured goods, having steadily ceded that position to East Asia. Detroit town which was once the pioneer in producing car of international standard is in shambles.

The picture that emerges is that now the West is no looger the exclusive house of modernity. Modernity is being openly disputed between Western powers and Eastern powers. Analysts predict that in 16 years from now, in 2027, the U.S. will pass the baton to China, which will become the largest economy in the world. Several decades later India's economy may relegate America to the third spot. However, the inpact of Westernization in the East Asian countries will be limited in as much as these societies and their modernition will remain indvidual and distinctive, rooted in and shaped by their own customs and cultures.

q

A fool confuses - Power for virtue, conviction for Truth, Revenge for justice, kindness for weakness.

नाम में है राम की महिमा

- राममनोहर लोहिया

राम, कृष्ण और शिव ये कोई एक दिन के बनाए हुए नहीं हैं। इनको आपने बनाया। इन्होंने आपको नहीं बनाया। आमतौर से आप यही सुना करते हो कि राम और कृष्ण और शिव ने हिंदुस्तान या हिंदुस्तानियों को बनाया। किसी हद तक शायद यह बात सही भी हो, लेकिन ज्यादा सही बात यह है कि करोड़ों हिंदुस्तानियों ने, युग-युगांतर के अंतर में, हजारों बरस में, राम, कृष्ण और शिव को बनाया। उसमें अपनी हंसी और अपने सपने के रंग भरे और तब राम, कृष्ण और शिव जैसी चीजें सामने हैं।

राम की सबसे बड़ी महिमा उनके उस नाम से मालूम होती है, जिसमें उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहकर पुकारा जाता है। जो मन से आया सो नहीं कर सकते। राम की ताकत बंधी हुई है, उसका दायरा खिंचा हुआ है। राम की ताकत पर कुछ नीति की या शास्त्र की या धर्म की या व्यवहार की या अगर आप आज की दुनिया का एक शब्द ढूंढें तो विधान की मर्यादा है। जिस तरह किसी भी कानून की जगह, जैसे विधानसभा या लोकसभा पर विधान रोक लगा दिया करता है, उसी तरह राम के कामों पर रोक लगी हुई है। वह रोक क्यों लगी हुई है और किस तरह की है, इस बात में आप अभी मत पड़िए। लेकिन इतना कह देना काफी होगा कि पुराने दकियानूसी लोग भी जो राम और कृष्ण को विष्णु का अवतार मानते हैं, राम को तो सिर्फ आठ कलाओं का अवतार मानते हैं। और कृष्ण को सोलह कलाओं का अवतार। कृष्ण संपूर्ण और राम अपूर्ण। अपूर्ण शब्द सही नहीं होगा, लेकिन अपना मतलब बताने के लिए मैं इस शब्द का इस्तेमाल किए लेता हूं। ऐसे मामलों में कोई अपूर्ण और संपूर्ण नहीं हुआ करता, लेकिन जाहिर है जब एक में आठ कलाएं होगी और दूसरे में सोलह कलाएं होगी तो उससे कुछ नतीजे तो निकल ही जाया करेंगे।

'भागवत' में एक बड़ा दिलचस्प किस्सा है। सीता खोई थीं तब राम को दुःख हुआ था। दुःख जरा ज्यादा हुआ था। किसी हद तक मैं समझ भी सकता हूं, गोकि लक्ष्मण भी वहां पर थे और देख रहे थे। इसलिए राम का पेड़ों से बात करना और रोना वगैरह कुछ ज्यादा समझ में नहीं आता। अकेले राम रो लेते तो बात दूसरी थी, लेकिन लक्ष्मण के देखते हुए, पेड़ से बात करना और रोना वगैरह, जरा ज्यादा आगे

बढ़ गई बात। कौन जाने, शायद वाल्मीकि और तुलसीदास को यही पसंद रहा हो। लेकिन याद रखना चाहिए कि वाल्मीकि और तुलसीदास में भी फर्क है। वाल्मीकि की सीता और तुलसीदास की सीता, दोनों में बिल्कुल दो अलग-अलग दुनिया का फर्क है। अगर कोई इस पर भी एक किताब लिखना शुरू करे कि सीता हिंदुस्तान में तीन-चार हजार बरस के दौरान में कितनी बदली, तो वह बहुत ही दिलचस्प किताब होगी। अभी तक ऐसी किताबें लिखी नहीं जा रही हैं, लेकिन लिखी जानी चाहिए। खैर, राम रोए, पेड़ों से बोले, दुःखी हुए और उस वक्त चंद्रमा हंसा था। जाने क्यों चंद्रमा को ऐसी चीजों में दिलचस्पी रहा करती है कि वह हंसा करता है, ऐसा लोग कहते हैं। वह खूब हंसा।

राम विष्णु के अवतार तो थे ही, चाहे आठ ही कला वाले। विष्णु को बात याद थी, न जाने कितने बरसों के बाद। कुछ लोग कहते हैं, लाखों बरसों के बरसों के बाद, हजारों बरसों के बाद, लेकिन मेरी समझ में शायद हजार, दो हजार बरस के बाद जब कृष्ण के रूप में वे आए तो फिर एक दिन, हजारों गोपियों के बीच में कृष्ण ने भी अपनी लीला रचाई। वे सोलह हजार थीं या बारह हजार थीं, इसका मुझे ठीक अंदाज नहीं। एक-एक गोपी के अलग-अलग से, कृष्ण सामने आए और बार-बार चंद्रमा की तरफ देखकर ताना मारा, बोलो, अब हंसो। जो चंद्रमा राम को देखकर हंसा था जब राम रोये थे, उसी चंद्रमा को अंगुली दिखाकर कृष्ण ने ताना मारा कि अब जरा हंसो, देखो तो सही। सोलह कला और आठ कला का यह फर्क रहा।

राम ने मनुष्य की तरह प्रेम किया। मैं इस समय इस बहस में बिल्कुल नहीं पड़ना चाहता कि सचमुच कृष्ण ने ऐसा प्रेम किया या नहीं। यह बिल्कुल फिजूल बात है। मैं शुरू में ही कह चुका हूं कि ऐसी कहानियों का असर ढूंढ़ा जाता है, यह देखकर नहीं कि वे सच्ची हैं या झूठी, लेकिन यह देखकर कि उनमें कितना सच भरा हुआ है और दिमाग पर उनका कितना असर पड़ता है। राम रोये तो चंद्रमा ने विष्णु को ताना मारा। कृष्ण सोलह हजार गोपियों के बीच में बांसुरी बजाते रहे, तो चंद्रमा को विष्णु ने ताना मारा। ये किस्से मशहूर हैं। इसी से आप और नतीजे निकालिए।

राम, कृष्ण और शिव भारत में पूर्णता के तीन महान स्वप्न हैं। सबका रास्ता अलग-अलग है। राम की पूर्णता मर्यादित व्यक्तित्व में है, कृष्ण की उन्मुक्त या संपूर्ण व्यक्तित्व में और शिव की असीमित व्यक्तित्व में, लेकिन हर एक पूर्ण है।

❑

विभिन्न रूप हैं दीपावली के

- कृष्ण कुमार यादव

दीपावली भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख त्यौहार है जिसका बेसब्री से इंतजार किया जाता है। दीपावली माने 'दीपकों की पंक्ति'। दीपावली के पर्व के पीछे मान्यता है कि रावण-वध के बीस तीन दिन पश्चात् भगवान राम अनुज लक्ष्मण व पत्नी सीता के साथ चौदह वर्षों के वनवास पश्चात् अयोध्या वापस लौटे थे। जिस दिन श्री राम अयोध्या लौटे, उस रात्रि कार्तिक मास की अमावस्या थी अर्थात् आकाश में चांद बिल्कुल नहीं दिखाई देता था। ऐसे माहौल में नगरवासियों ने भगवान राम के स्वागत में पूरी अयोध्या को दीपों के प्रकाश से जगमग करके मानो धरती पर ही सितारों को उतार दिया। तभी से दीपावली का त्यौहार मनाने की परम्परा चली आ रही है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार आज भी दीपावली के दिन भगवान राम, लक्ष्मण और पत्नी सीता के साथ अपनी वनवास स्थली चित्रकूट में विचरण कर श्रद्धालुओं की मनोकामनाओं की पूर्ति करते हैं। यही कारण है कि दीपावली के दिन लाखों श्रद्धालु चित्रकूट में मंदाकिनी नदी में डुबकी लगाकर कामदगिरि की परिक्रमा करते हैं और दीप दान करते हैं। दीपावली के संबंध में एक प्रसिद्ध मान्यतानुसार मूलत: यह यक्षों का उत्सव है। दीपावली की रात्रि को यक्ष अपने राजा कुबेर के साथ हास-विलास में बिताते वे अपनी यक्षिणियों के साथ आमोद-प्रमोद करते हैं। दीपावली पर रंग-बिरंगी आतिशबाजी, लजीज पकवान एवं मनोरंजन के जो विविध कार्यक्रम होते हैं, वे यक्षों की ही देन हैं।

सभ्यता के विकास के साथ यह त्यौहार मानवीय हो गया और धन के देवता कुबेर की बजाय धन की देवी लक्ष्मी की इस अवसर पर पूजा होने लगी, क्योंकि कुबेर की मान्यता सिर्फ यक्ष जातियों में थी पर लक्ष्मी जी देव तथा मानव जातियों में भी पूज्य हैं। कई जगहों पर अभी भी दीपावली के दिन लक्ष्मी पूजा के साथ-साथ गणेश जी की पूजा भी होती है। गणेश जी को दीपावली पूजा में मंचासीन करने में शैव-सम्प्रदाय का काफी योगदान है। ऋद्धि-सिद्धि के दाता के रूप में उन्होंने गणेश जी को प्रतिष्ठित किया। यदि तार्किक आधार पर देखें तो कुबेर जी मात्र धन के अधिपति हैं जबकि गणेश जी को संपूर्ण ऋद्धि-सिद्धि के दाता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इसी प्रकार लक्ष्मी जी मात्र धन की स्वामिनी नहीं वरन् ऐश्वर्य एवं सुख-समृद्धि की भी स्वामिनी मानी जाती हैं। अत: कालांतर में लक्ष्मी-गणेश का

संबंध लक्ष्मी-कुबेर की बजाय अधिक निकट प्रतीत होने लगा। दीपावली के साथ लक्ष्मी पूजन के जुड़ने का कारण लक्ष्मी और विष्णु जी का इसी दिन विवाह सम्पन्न होना भी माना जाता है।

दीपावली से जुड़ी एक अन्य मान्यतानुसार राजा बलि ने देवताओं के साथ देवी लक्ष्मी को भी बन्दी बना लिया। देवी लक्ष्मी को मुक्त कराने के लिए भगवान विष्णु ने वामन का रूप धरा और देवी को मुक्त कराया। इस अवसर पर राजा बलि ने भगवान विष्णु से वरदान लिया था कि जो व्यक्ति धनतेरस, नरक-चतुर्दशी व अमावस्या को दीपक जलाएगा उस पर लक्ष्मी की कृपा होगी। तभी से इन तीनों पर्वों पर दीपक जलाया जाता है और दीपावली के दिन ऐश्वर्य की देवी मां लक्ष्मी एवं विवेक के देवता व विघ्नहर्ता भगवान गणेश की पूजा की जाती है। धनतेरस के दिन धन एवं ऐश्वर्य की देवी मां लक्ष्मी की दीपक जलाकर पूजा की जाती है और प्रतीकात्मक रूप में लोग सोने-चांदी व बर्तन खरीदते हैं। धनतेरस के अगले दिन अर्थात् कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी के रूप में मनाने की परंपरा है। पुराणों के अनुसार इसी दिन भगवान कृष्ण ने राक्षस नरकासुर का वध किया था। नरक चतुर्दशी पर घरों की धुलाई सफाई करने के बाद दीपक जलाकर दरिद्रता की विदाई की जाती है। वस्तुत: उस दिन दस महाविद्या में से एक अलक्ष्मी (धूमावती) की जयंती होती है। अलक्ष्मी दरिद्रता की प्रतीक है, इसलिए चतुर्दशी को उनकी विदाई कर अगले दिन अमावस्या को दस महाविद्या की देवी कमलासीन मां लक्ष्मी (देवी कमला) की पूजा की जाती है। नरक चतुर्दशी को 'छोटी दीपावली' भी कहा जाता है।

दीपावली के दिन लोग लाई, खील, गट्टा, लड्डू इत्यादि प्रसाद के लिए खरीदते हैं और शाम होते ही वंदनवार व रंगोली सजाकर लक्ष्मी-गणेश की पूजा करते हैं और फिर पूरे घर में दीप जलाकर मां लक्ष्मी का आह्वान करते हैं। व्यापारी वर्ग पारंपरिक रूप से दीपावली के दिन ही नई हिसाब-बही बनाता है और किसान अपने खेतों पर दीपक जलाकर अच्छी फसल होने की कामना करते हैं। उपहार व मिठाइयों की सौगात देने का सिलसिला चलता है। दीपावली का त्यौहार इस बात का प्रतीक है कि हम इन दीपों से निकलने वाली ज्योति से सिर्फ अपना घर ही रोशन न करें वरन् इस रोशनी में अपने हृदय को भी आलोकित करें और समाज को राह दिखाएं। दीपक सिर्फ दीपावली का ही प्रतीक नहीं वरन् भारतीय सभ्यता में इसके प्रकाश को इतना पवित्र माना गया है कि मांगलिक कार्यों से लेकर भगवान की आरती तक इसका प्रयोग अनिवार्य है। यहां तक कि परिवार में किसी की गंभीर अस्वस्थता अथवा मरणासन्न स्थिति होने पर दीपक बुझ जाने को अपशकुन भी माना जाता है। अगर हम

इतिहास के गर्भ में झांककर देखें तो सिंधु घाटी सभ्यता की खुदाई में पकी हुई मिट्टी के दीपक प्राप्त हुए हैं, मोहनजोदड़ों की खुदाई में प्राप्त भवनों में दीपकों को रखने हेतु ताख बनाए गए थे तथा मुख्य द्वार को प्रकाशित करने हेतु आलों की श्रृंखला थी। इसमें कोई शक नहीं कि दीपकों का आविर्भाव सभ्यता के साथ ही हो चुका था, पर दीपावली का जन-जीवन में पर्व रूप में आरम्भ श्री राम के अयोध्या आगमन से ही हुआ।

भारत के विभिन्न राज्यों में इस त्यौहार को विभिन्न रूपों में मनाया जाता है। वनवास के पश्चात् श्री राम के अयोध्या आगमन को उनका दूसरा जन्म मानकर केरल में कुछ आदिवासी जातियां दीपावली को राम के जन्म-दिवस के रूप में मनाती हैं। गुजरात में नमक को साक्षात् लक्ष्मी का प्रतीक मान दीपावली के दिन नमक खरीदना व बेचना शुभ माना जाता है जो राजस्थान में दीपावली के दिन घर में एक कमरे को सजाकर व रेशम के गद्दे बिछाकर मेहमानों की तरह बिल्ली का स्वागत किया जाता है। बिल्ली के समक्ष खाने हेतु तमाम मिठाइयां व खीर इत्यादि रख दी जाती है। यदि इस दिन बिल्ली सारी खीर खा जाये तो इसे वर्ष भर के लिए शुभ व साक्षात् लक्ष्मी का आगमन माना जाता है। उत्तरांचल के थारू आदिवासी अपने मृत पूर्वजों के साथ दीपावली मनाते हैं तो हिमाचल प्रदेश में कुछ आदिवासी जातियां इस दिन यक्ष पूजा करती हैं। पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में दीपावली को काली पूजा के रूप में मनाया जाता है। स्वामी रामकृष्ण परमहंस को आज ही के दिन मां काली ने दर्शन किए थे, अत: इस दिन बंगाली समाज में काली दशहरा-दीपावली के दौरान पूर्वी भारत के क्षेत्रों में देवी के रौद्र रूपों को पूजा जाता है, वहीं उत्तरी व दक्षिण भारत में देवी के सौम्य रूपों अर्थात् लक्ष्मी, सरस्वती व दुर्गा मां की पूजा की जाती है।

ऐसा नहीं है कि दीपावली का सम्बन्ध सिर्फ हिन्दुओं से ही रहा है। इस दिन भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्ति के चलते जैन समाज दीपावली को निर्वाण दिवस के रूप में मनाता है तो सिक्खों के प्रसिद्ध स्वर्ण मंदिर की स्थापना एवं गुरु हरगोविंद सिंह की रिहाई दीपावली के दिन होने के कारण इसका महत्व सिक्खों के लिए भी बढ़ जाता है। आर्य समाज में संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती ने भी वर्ष 1833 में दीपावली के दिन ही प्राण त्यागे थे। देश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी दीपावली का त्यौहार बड़े धूम-धाम से मनाया जाता है। वर्ष 2005 में ब्रिटिश संसद में दीपावली पर्व के उत्सव पर भारतीय नृत्य, संगीत, रंगोली, संस्कृत मंत्रों के उच्चारण व हिन्दू देवी देवताओं की उपासना का आयोजन किया गया। ब्रिटेन के करीब सात लाख हिन्दू इस पर्व को उत्साह से मनाते हैं। सन् 2004 में तो ब्रिटेन ने इस पर्व पर डाक-टिकट

भी जारी किया था। अमेरिका के ह्वाइट हाउस में दीपावली का त्यौहार औपचारिक रूप से आयोजित करने की मांग उठ रही है।

दीपावली के दूसरे दिन कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को गोवर्धन पूजा की जाती है। इस पर्व पर गाय के गोबर से गोवर्धन की आकृति बना उसके चारों तरफ गाय, बछड़े और अन्य पशुओं के साथ बीच में भगवान कृष्ण की आकृति बनाई जाती है। इसी दिन छप्पन प्रकार की सब्जियों द्वारा निर्मित अन्नकूट एवं दही-बेसन की कढ़ी द्वारा गोवर्धन का पूजन एवं भोग लगाया जाता है। कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाले भारत में यह पर्व हमें पशुओं मुख्यत: गाय, पहाड़, पेड़-पौधों, ऊर्जा के रूप में गोबर व अन्न की महत्ता बताता है। गाय को देवी लक्ष्मी का प्रतीक मानकर लक्ष्मी पूजा के बाद गौ-पूजा की भी अपने देश में परम्परा रही है। पौराणिक मान्यतानुसार द्वापर में अपने बाल्य काल में श्री कृष्ण ने नन्दबाबा, यशोदा मैया व अन्य ब्रजवासियों को बादलों के स्वामी इन्द्र की पूजा करते हुए देखा, ताकि इंद्र देवता वर्षा करें और उनकी फसलें लहलहायें तथा वे सुख-समृद्धि की ओर अग्रसर हों। श्रीकृष्ण ने ग्रामवासियों को समझाया कि वर्षा का जल हमें गोवर्धन पर्वत से प्राप्त होता है न कि इंद्र की कृपा से। इससे सहमत होकर ग्रामवासियों को विश्वास दिलाने के लिए कि गोवर्धन जी उनकी पूजा से प्रसन्न हैं, पर्वत के अन्दर प्रवेश करके सारी सामग्रियों को ग्रहण कर लिया। अपने दूसरे स्वरूप में ब्रजवासियों के साथ खड़े होकर कहा-देखो! गोवर्धन देवता प्रसन्न होकर भोग लगा रहे हैं, अत: उन्हें और सामग्री लाकर चढ़ाएं। इंद्र को जब अपनी पूजा बंद होने की बात पता चली तो उन्होंने अपने संवर्तक मेघों को आदेश दिया कि वे ब्रज को पूरा डुबो दें। भारी वर्षा से घबराकर जब ब्रजवासी श्रीकृष्ण के पास पहुंचे तो उन्होंने उनके दुखों का निवारण करने हेतु अपनी तर्जनी पर गोवर्धन पर्वत को ही उठा लिया। पूरे सात दिनों तक वर्षा होती रही पर ब्रजवासी गोवर्धन पर्वत के नीचे सुरक्षित पड़े रहे। सुदर्शन चक्र ने संवर्तक मेघों के जल को सुख दिया। अंतत: पराजित होकर इंद्र श्रीकृष्ण के पास आए और क्षमा मांगी। उस समय सुरभि गाय ने श्रीकृष्ण का दुग्धाभिषेक किया और इस अवसर पर छप्पन भोग का भी आयोजन किया गया। तब से भारतीय संस्कृति में गोवर्धन पूजा और अन्नकूट की परम्परा चल आ रही है।

❑

तंत्र नहीं लोक के नायक थे जे.पी.

- राम शिव मूर्ति यादव

''भ्रष्टाचार केवल शासन में ही नहीं है, बल्कि वह लोकजीवन के हर एक क्षेत्र में मौजूद है। ऐसी स्थिति में मात्र सत्ता परिवर्तन से जन समस्याओं का हल नहीं होगा, बल्कि इसके लिए व्यवस्था परिवर्तन करना होगा। इस व्यवस्थागत परिवर्तन के बाद ही समतामूलक समाज की स्थापना हो सकती है....'' यह उद्‌गार समाजवाद एवं सर्वोदय से सम्पूर्ण क्रान्ति तक की यात्रा करने वाले जय प्रकाश नारायण के थे, जिन्होंने अपने जीवन में तमाम अवसरों के बावजूद कोई पद स्वीकार नहीं किया। गीता में वर्णित निष्काम कर्म भावना के अनुसार जयप्रकाश नारायण सदैव सक्रिय रहे और सत्ता की कीमत पर कोई भी समझौता नहीं किया। वे लोकतंत्र की उस अवधारणा के कायल थे जो जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन स्थापित करती है। जनमत की आड़ में लोगों की संवेदनाओं को ठुकराकर सत्तातंत्र से येन-केन प्रकारेण चिपके रहने का उन्होंने सदैव विरोध किया। जय प्रकाश नारायण के लिए लोक महत्त्वपूर्ण था न कि तंत्र। इस तंत्र की आड़ में लोक की भावनाओं का तिरस्कार उन्हें कभी मंजूर नहीं था।

11 अक्टूबर, 1902 को उत्तर प्रदेश व बिहार के सीमास्थल पर स्थित सिताबदियारा (सारण जनपद) गांव में जयप्रकाश नारायण का जन्म एक सामान्य किसान परिवार में हुआ। बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि के मेधावी छात्र रहे जे.पी. ने 1919 में हाई स्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। 1921 में जब गांधीजी द्वारा प्रवर्तित असहयोग आंदोलन चरम पर था, तो जे.पी. भी इससे अछूते नहीं रह सके उन्होंने इण्टरमीडिएट की परीक्षा छोड़ दी एवं अन्य विद्यार्थियों को भी स्कूल कालेज छोड़ने के लिए प्रेरित किया। इस बीच उनकी शादी प्रभावती जी से हो गयी, जिन्होंने जे.पी. के व्यक्तित्व को एक विस्तार दिया। फरवरी 1922 में चौरीचौरा काण्ड के बाद महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन वापस लेने की घोषणा की और इसके कुछेक महीने बाद ही जे.पी. आगामी अध्ययन के लिए अमेरिका चले गये। वहां उन्होंने वहां बूट पालिश करने से लेकर होटलों में जूठे प्लेट धोने और बूचड़खाने तक में काम किया। जे.पी. ने कठिनाइयों से विचलित होने की बजाय सदैव उनका अवसरों के रूप में उपयोग

करना सीखा। इसी अदम्य इच्छाशक्ति के चलते उन्होंने ओहियो विश्वविद्यालय से समाजशास्त्र में स्नातकोत्तर की उपाधि धारण की। मई 1922 से सितम्बर 1929 तक अमेरिका में रहने के पश्चात् जे.पी. भारत लौटे और उस समय स्वतंत्रता संग्राम का पर्याय बन चुकी कांग्रेस से जुड़कर आनन्द भवन इलाहाबाद में रहने लगे। 1934 के दौरान जे.पी. ने आचार्य नरेन्द्र देव, डॉ. राममनोहर लोहिया, अशोक मेहता, अच्युत तटवर्धन इत्यादि के साथ कांग्रेस के भीतर समाजवादी विचारों से लैस एक गरम दल बना लिया और वे इसके अगुआ रहे। वस्तुतः जे.पी. ने एक साथ ही गांधीवादी और क्रान्तिकारी आन्दोलन की उष्णता महसूस की और दोनों का समन्वय स्वीकार किया।

जे.पी. ने स्वतंत्रता आन्दोलन में बढ़-चढ़कर भूमिका निभायी। 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान उनका नाम उभरकर सामने आया। इस आन्दोलन की शुरूआत में ही सभी प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। जे.पी. को भी गिरफ्तार करके नासिक व हजारी बाग की जेल में रखा गया। पर तूफान को कौन बांध पाया है, सो हजारीबाग जेल की चहारदीवारी को लांघकर जे.पी. 'करो या मरो' भावना से प्रेरित होकर भाग निकले और जेल से बाहर रहकर भारत छोड़ो आन्दोलन को मूर्त रूप दिया। यह अंग्रेजी हुकूमत से मुंह पर एक करारा तमाचा था और इस बात का प्रतीक भी कि अब भारत में अंग्रेजों के दिन गिने-चुने ही रह गये थे। जे.पी. को पकड़ने के लिए अंग्रेजी हुकूमत ने इनाम की भी घोषणा की, पर जे.पी. पकड़ में नहीं आये। भारत छोड़ो आन्दोलन के आह्वान के लगभग एक वर्ष बाद जाकर 18 सितम्बर, 1943 को लाहौर के पास ट्रेन में नाटकीय अंदाज में जे.पी. की गिरफ्तारी हुई। अंग्रेजी हुकूमत ने जे.पी. को जेल में कठोर यातनायें दीं और उन्हें बर्फ की सिल्लियों पर लिटाया गया। जे.पी. को भारत की आजादी का अहसास होने लगा था। 11 अप्रैल, 1946 को जब वे जेल से रिहा हुए तो जनमानस ने उनका ''अगस्त क्रान्ति के नायक'' रूप में जोरदार स्वागत किया।

15 अगस्त, 1947 को देश आजाद हो गया। पूरे राष्ट्र के लिए यह हर्ष का विषय था पर जे.पी. के मन में देश विभाजन की पीड़ा थी। जे.पी. देश विभाजन के घोर विरोधी थे और भारत-पाकिस्तान मित्रता के जबरदस्त पक्षधर। इस बीच स्वतंत्रता आन्दोलन का पर्याय रही कांग्रेस के चरित्र में भी जे.पी. ने बदलाव महसूस किया। कांग्रेस के चरित्र में उन्हें समतामूलक समाज की बजाय अवसरवादिता और पदलोलुपता की गंध आने लगी। गांधी जी की हत्या के बाद तो उनका रहा-सहा धैर्य भी जवाब दे गया। इससे आहत होकर बड़ी तल्खी से उन्होंने गृहमंत्री सरदार

वल्लभभाई पटेल से इस्तीफे की मांग कर डाली। जे.पी. की राजनीति में चरित्र था, चालाकी नहीं। यही कारण था कि पं. जवाहरलाल नेहरू भी उनकी उपेक्षा नहीं कर पाते थे। गृहमंत्री के इस्तीफे के सवाल पर पं. नेहरू ने आकाशवाणी पर प्रसारित अपने वक्तव्य में मंत्रिमण्डलीय परम्परानुसार सरदार पटेल का बचाव अवश्य किया पर यह कहने से भी नहीं चूके कि–''जे.पी. एक दिन देश की तकदीर गढ़ेंगे।''

गांधी जी की हत्या के पश्चात् जे.पी. ने समाजवाद का नारा बुलन्द किया और कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के गठन द्वारा कांग्रेस के समानान्तर समाजवादी संगठन को बल प्रदान किया। सत्ता की चाहरदीवारी से दूर जे.पी. ने अपने को जनमानस के बीच खड़ा पाया। नवम्बर 1951 में पटना में किसान मार्च का नेतृत्व करते हुए उनकी भावनायें स्पष्ट परिलक्षित हुई। 1954 में बिनोबा भावे के 'भूदान आन्दोलन' से जे.पी. जुड़े और अपने जीवनदान की घोषणा करते हुए राजनीति से भी संन्यास ले लिया। सर्वोदयी भावना को अपनाते हुए उन्होंने राजनैतिक परिवर्तन से परे बुनियादी परिवर्तन की सम्भावनाओं को भी टटोला। इसी क्रम में बिनोबा भावे के साथ चम्बल के दुर्दान्त डाकुओं के हृदय परिवर्तन में भी उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। जे.पी. ने समाज के नवनिर्माण के लिए तमाम रचनात्मक कार्यक्रमों में अवदान दिया और 'गांधी विद्या संस्थान' (बनारस) जैसी तमाम संस्थायें भी खड़ी कीं। जे.पी. ने–समाजवाद क्यों, प्रिजन डायरी, सर्वोदय और लोकतंत्र, समाजवाद, फर्स्ट थिंग्स, मेरी विचार–यात्रा, फर्स्ट कांग्रेस सोशलिस्ट, नेशन बिल्डिंग इन इंडिया, संपूर्ण क्रांति के लिए आह्वान, आमने–सामने इत्यादि तमाम चर्चित किताबें भी लिखीं।

जे.पी. युवा शक्ति की ताकत को बखूबी महसूस करते थे। वे जानते थे कि युवा शक्ति के ही कंधों पर भारत का भविष्य टिका हुआ है। दिसम्बर 1973 में पनवार आश्रम से जे.पी. ने 71 वर्ष की आयु में 'यूथ फार डेमोक्रेसी' नामक अपील जारी की। यह वह दौर था जब देश में लोकतांत्रिक मूल्यों का गला घोंटने का प्रयास किया जा रहा था। जे.पी. ने अपील के साथ ही युवाओं के बीच जाकर उनसे सीधा संवाद किया और एक बार फिर राजनैतिक रूप से सक्रिय हुए। नतीजतन, युवा शक्ति की तरंगें देश में हिलोरें मारने लगीं और उद्घोष हुआ–''सम्पूर्ण क्रान्ति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है।'' गुजरात में युवाओं ने जब आन्दोलन आरम्भ किया तो जे.पी. उनके बीच पहुंचे और कहा–''मैं देश के वर्तमान माहौल के बारे में काफी चिन्तित था। मैं अंधेरे में टटोल रहा था और मुझे कोई रास्ता नहीं दिख रहा था। ऐसे समय में गुजरात के युवाओं ने इस आन्दोलन की मशाल जलायी और इसने मुझे प्रकाश

(18)

दिखाया।'' गुजरात का आन्दोलन तो बहुत दिन तक नहीं चला पर उसकी गूंज अन्य प्रान्तों में भी सुनायी दी। इस बीच 12 सूत्रीय मांगों को लेकर फरवरी 1974 में बिहार के छात्र भी आन्दोलनरत हो गये थे। 18 मार्च को विधानसभा के समक्ष छात्रों के सत्याग्रह के दौरान पुलिस ने जमकर लाठीचार्ज किया और गोलियां चलायीं। नतीजतन, पटना आन्दोलन की आग में जल उठा। इस आन्दोलन के पीछे जे.पी. की भूमिका को चिन्हित करते हुये सरकार में बैठे लोगों ने तिलमिलाकर उन्हें विदेशी एजेण्ट की संज्ञा दी और मौन जुलूस तक निकालने की इजाजत नहीं दी। बूढ़े जे.पी. का जवान मन क्रान्ति के लिए तड़प उठा और उन्होंने युवाओं का आह्वान करते हुए कहा–''डरो मत, अभी मैं जिंदा हूं।'' फिर क्या था, जे.पी. ने भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, मुनाफाखोरी इत्यादि व्यवस्थागत विसंगतियों पर जमकर प्रहार किये और सच्चे अर्थों में 'लोक' का राज स्थापित करने के लिए कमर कस ली। 8 अप्रैल, 1974 को पटना में जे.पी. ने मौन जुलूस निकाला और 9 अप्रैल को पटना की एक ऐतिहासिक जनसभा में उन्होंने शान्तिपूर्ण आन्दोलन आरम्भ करने की घोषणा की। जे.पी. का जादू चल निकला और छात्रों व युवा शक्ति ने उन्हें हाथों–हाथ लेते हुए 'लोकनायक' का खिताब दिया। देखते ही देखते पूरा बिहार इस आन्दोलन की जद में आ गया और जे.पी. के पीछे जनमानस उमड़ पड़ा। उन पर लाठियाँ बरसीं। इस बीच 12 जून, 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक फैसले में इन्दिरा गांधी के चुनाव को अवैध करार दे दिया। 23 जून को दिल्ली में संयुक्त विपक्ष के कार्यक्रम को जे.पी. ने मुख्य वक्ता के रूप में सम्बोधित करते हुए राजसत्ता की धज्जियाँ उड़ा कर रख दीं।

73 वर्षीय बूढ़े जे.पी. का गर्जना राजसत्ता को बर्दाश्त नहीं हुई और 25 जून, 1975 को प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने आन्तरिक सुरक्षा को खतरा बताते हुए आपातकाल की घोषणा कर दी। 26 जून को तड़के 4 बजे ही नई दिल्ली के गांधी शान्ति प्रतिष्ठान में ठहरे जे.पी. को गिरफ्तार कर लिया गया। लगभग ढाई माह पश्चात् जे.पी. को एक महीने के पेरोल पर 12 नवम्बर को जब रिहा किया गया तो उनका स्वास्थ्य काफी हद तक गिर चुका था। उनके दोनों गुर्दों ने काम करना बन्द कर दिया था। पर जे. पी. का यह संघर्ष व्यर्थ नहीं गया और जनवरी 1977 में देश में आम चुनाव की घोषणा हुई। 'लोकनायक' की आवाज लोकमानस तक पहुंची और श्रीमती इन्दिरा गांधी को रायबरेली लोकसभा सीट से पराजय का मुंह देखना पड़ा। केन्द्र में मोरारजी देसाई के नेतृत्व में पहली गैर कांग्रेसी सरकार का गठन हुआ। इस पर जे.पी. ने कहा–''मेरा काम पूरा हो गया। अब मैं मरना चाहता हूं।'' जे.पी. का स्वास्थ्य दिन–ब–दिन गिरता गया

और अन्ततः 8 अक्टूबर, 1978 को उनका निधन हो गया।

आज जबकि चारों तरफ राजनैतिक पदों के लिए होड़ मची हुई है, सत्ता प्राप्ति के लिए राजनैतिक दल किसी भी स्तर पर उतरने को तैयार हैं, सामाजिक जीवन में शुचिता गौण हो गई है... ऐसे में जे.पी. की प्रासंगिकता स्वतः सिद्ध हो जाती है। यह जे.पी. का लोकमानस के प्रति अटूट प्रेम ही कहा जायेगा कि सरकार गठन के पश्चात् भी वे किसी पद या मद में नहीं डूबे। उस दौर में जब लोग उगते सूरज को सलाम कर रहे थे, जे.पी. सारी पुरानी बातों को भूलकर इन्दिरा गांधी से मिलने उनके निवास पर गये और उन्हें जनता की सेवा के प्रति और उन्मुख होकर कार्य करने की सलाह दी। उनके मन में किसी के प्रति कोई क्षोभ या दुराग्रह नहीं था। इन्दिरा गांधी से उन्होंने कहा–''इन्दु, यही लोकतंत्र है। तुम घबराना मत। जनता की सेवा नहीं छोड़ना। यही सबसे बड़ा धर्म है।'' जे.पी. के इस महान व्यक्तित्व और राजधर्म निभाने की सलाह पर इन्दिरा गांधी की आंखें भी छलछला गई थीं, शायद उस समय तक राजनेताओं की आंखों का पानी नहीं मरा था। युवा शक्ति में विश्वास कर जे.पी. ने युवाओं को न सिर्फ रचनात्मक आन्दोलनों से जोड़ा बल्कि उन्हें उनके अधिकारों के प्रति सचेत भी किया। आज की युवा पीढ़ी जिस प्रकार दिग्भ्रमित होकर नेताओं और राजनैतिक दलों के चक्कर काटती है और अन्ततः मृगतृष्णा के सिवाय उसे कुछ नहीं प्राप्त होता, ऐसे में जे.पी. की सोच स्वतः प्रासंगिक हो जाती है। पदों को ठुकराने वाले जे.पी. पर छात्र आन्दोलन में छात्रों को गुमराह करने और अपना स्वार्थ साधने से लेकर पलायनवादी होने तक के आरोप लगे, पर इन सबसे बेपरवाह जे.पी. अन्त तक एक नायक के रूप में 'लोक' की लड़ाई लड़ते रहे और एक इतिहास रच गये।

सच्ची सेवा

अगर तुम अपनी अंतर की शक्ति को पहचान जाओ, तो जनसेवा के लिए तुम्हें किसी गद्दी या दर्जे की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। बिना किसी औपचारिक पद के तुम कहीं बेहतर सेवा कर सकते हो जैसे कि महात्मा गांधी ने किया। अक्सर शासक सुधारक नहीं होता है और सुधारक शासक नहीं होता। अपने छोटे-छोटे फायदों के लिए राजनीतिक दल व धार्मिक नेता जनता की भावुकता का गलत इस्तेमाल करते हैं। अधिकांश नेता सच्ची सेवा की शिक्षा से वंचित हैं।

– श्री श्री रविशंकर

लाल बहादुर शास्त्री जयन्ती– 2 अक्टूबर

सरलता एवं सादगी की प्रतिमूर्ति : लालबहादुर शास्त्री

– पं. लक्ष्मीशंकर व्यास

गांधी युग के सच्चे प्रतिनिधि और स्वतंत्र भारत के द्वितीय प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने उन्नीस महीने के प्रधानमंत्रित्वकाल में राष्ट्र की जिस दृढ़ता एवं निर्भीकता से गौरववृद्धि की, वह भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगी। राष्ट्र की स्थिरता, शक्ति संचार तथा एकता की भावना, आपके शासनकाल की उल्लेखनीय देन है।

आपका जन्म 2 अक्टूबर, 1904 ई. को सांस्कृतिक नगरी काशी में हुआ। आपके पिता श्री शारदा प्रसाद और माता श्रीमती रामदुलारी देवी थी। पिता बाल्यकाल में ही चल बसे थे। माता के स्नेह से पोषित होकर बालक लालबहादुर ने अपना जीवन निर्माण विषम परिस्थितियों में किया। आपके परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। यही कारण है कि अभाव की स्थिति में बालक लालबहादुर को एकाध बार दशाश्वमेध घाट से तैरकर गंगा पार कर रामनगर आना पड़ता था। इसीलिये स्वावलंबन और आत्मविश्वास आपके जीवन के मूल मंत्र बन गए। आरंभ में आपने भारतेन्दु द्वारा स्थापित हरिश्चंद्र विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की। आपने काशी विद्यापीठ से शास्त्री की उपाधि प्राप्त की। गांधी विचारधारा से प्रभावित होकर सन् 1921 में पढ़ाई छोड़कर आप असहयोग आंदोलन में कूद पड़े और ढाई वर्षों तक जेल में रहे।

सन् 1926 में श्री लालबहादुर शास्त्री लोकसेवक संघ के सदस्य बने और इलाहाबाद को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। सात वर्षों तक आप इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के सदस्य रहे। प्रायः चार वर्षों तक आप इलाहाबाद इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के भी सदस्य रहे। सन् 1930 से 36 तक आप इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने सन् 1935 से 38 तक प्रधान आप चुने गए। सन् 1937 में आप उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। सन् 1941 में आपको पुनः गिरफ्तार किया गया। आपको कुल मिलाकर आठ बार जेल यात्रा करनी पड़ी और प्रायः नौ वर्षों तक जेल में बंदी जीवन बिताना पड़ा।

पद से अधिक महत्व राष्ट्रसेवा का है, यह बात श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपने जीवन में अनेक बार उच्च पदों से त्यागपत्र देकर जनता के समक्ष प्रमाणित की। सन् 1951 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महामंत्री का पदभार ग्रहण करने के लिये आपने मंत्रिपद से इस्तीफा दिया। इसके बाद 1952 में जब आप केंद्रीय रेल तथा परिवहन मंत्री नियुक्त किए गए तब रेल दुर्घटना होने पर सार्वजनिक एवं प्रशासनिक जीवन में उच्च आदर्श उपस्थित करने के लिये आपने रेल मंत्री के पद से इस्तीफा दिया। सन् 1957 में आप लोकसभा के सदस्य चुने गए तथा परिवहन मंत्री के पद पर मार्च, सन् 1958 तक बने रहे। इसके पश्चात् आप केन्द्रीय वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री नियुक्त किए गए (1958-61)। गृह मंत्री श्री गोविंदवल्लभ पंत के निधन के बाद अप्रैल सन् 1961 में आप केन्द्रीय गृह मंत्री के पद पर नियुक्त किए गए।

सन् 1962 के महानिर्वाचन में इलाहाबाद क्षेत्र से आप लोकसभा के सदस्य पुनः चुने गए। कामराज योजना के अंतर्गत कांग्रेस का संगठनात्मक कार्य करने के लिये अगस्त 1963 में आपने केन्द्रीय मंत्रिमंडल से पद त्याग किया। प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू की अस्वस्थता के कारण आपको केन्द्रीय मंत्रिमंडल में पुनः नियुक्त किया गया और आप निर्विभागीय मंत्री बनाए गए। प्रधानमंत्री श्री नेहरू के आप अत्यन्त विश्वासपात्र थे और उनके कार्यों में सहायता देना आपका मुख्य कर्तव्य था। जवाहरलाल नेहरू के निधन पर 9 जून, सन् 1964 को सर्वसम्मति से लोकसभा के कांग्रेस दल के नेता चुने जाने के बाद आपने प्रधानमंत्री पद का भार ग्रहण किया।

श्री शास्त्री का प्रशासन काल देश की अग्निपरीक्षा का काल था। आंतरिक शांति तथा आर्थिक एवं खाद्य समस्याओं का समाधान जहां आवश्यक था, वहीं बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा का भी प्रश्न महत्वपूर्ण था। इन सभी राष्ट्रीय प्रश्नों पर शास्त्री जी ने जिस दृढ़ता, दूरदर्शिता, धैर्य एवं साहस का परिचय दिया, वह राष्ट्र को संकटकाल में सहज शक्ति और स्फूर्ति देता रहेगा।

नेपाल की सद्भाव यात्रा कर जहां आपने भारत नेपाल की परंपरागत मैत्री एवं ऐतिहासिक संबंधों में यथेष्ट सुधार किया वहीं कश्मीर जाकर हजरत बल कांड का बड़ा युक्ति और बुद्धि से समाधान किया। प्रधानमंत्री बनने के पूर्व ये दो कार्य आपकी राजनैतिक कुशलता का सहज परिचय देते हैं।

15 अगस्त, 1964 को लाल किले पर राष्ट्रीय ध्वज फहराते हुए आपने राष्ट्रीय गौरव का जो सहज स्वाभिमान प्रकट किया वह सदैव स्मरण रखने योग्य है। इस अवसर पर आपने कहा-'हम रहें या न रहें, लेकिन यह झंडा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि वह झंडा रहेगा, हम और आप रहें या न रहें, लेकिन

(20)

प्रधानमंत्री का पदभार ग्रहण करने के उपरांत शास्त्री जी ने संयुक्त अरब गणराज्य की राजधानी काहिरा जाकर तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन में बड़ी तेजस्विता से भारत का पक्ष प्रस्तुत किया। इसी अवसर पर आपने मार्शल टीटो तथा राष्ट्रपति नासिर से महत्वपूर्ण वार्ता की। दिसंबर में आपने लंदन में ब्रिटिश प्रधानमंत्री से विचार-विनियम किया। फरवरी, 1965 में आपने बर्मा के प्रधान जनरल नेविन से वार्ता की। 23 अप्रैल को आप दुबारा नेपाल की सद्भावना यात्रा पर गए। 12 मई को शास्त्री जी एक सप्ताह की रूस की राजकीय यात्रा पर गए। 10 जून को आपने कनाडा की भी सद्भावना यात्रा की और 17 जून को लंदन में राष्ट्रमंडल सम्मेलन में भाग लिया जुलाई में आपने यूगोस्लाविया की यात्रा की और मार्शल टीटो से वार्ता की।

सिंतबर 1965 में पाकिस्तान ने जम्मू क्षेत्र की अंतर्राष्ट्रीय सीमारेखा का उल्लंघन कर पैदल, टैंक तथा वायुसेना को भारतीय सीमा में आगे बढ़ने का आदेश दिया तो शास्त्री जी ने भी भारतीय विजयवाहिनी को लाहौर क्षेत्र में प्रवेश कर प्रहार करने का आदेश दे दिया। पाकिस्तानी सेना के बढ़ाव को रोकने में यह कारवाई बहुत सहायक हुई और अंततः उसे युद्धविराम के लिये विवश होना पड़ा। पाकिस्तानी सेना के अमरीकी पैटन टैंकों और सैबर जेट विमानों को भारतीय जवानों ने अद्भुत वीरता और साहस से पस्त कर डाला। इस विजय का श्रेय प्रधानमंत्री शास्त्री जी की निर्भीक तथा दूरदर्शितापूर्ण नीति को ही जाता है।

इस संकटकाल में आपने 'जय जवान और जय किसान' का नारा देकर राष्ट्र की सुरक्षा तथा आत्मनिर्भरता की समस्या की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट किया। 24 दिसम्बर को आपने रूस के आमंत्रण को स्वीकार किया और अयूब से शिखर वार्ता हेतु 3 जनवरी, 1966 को आप ताशकंद गए। 10 जनवरी को ताशकंद समझौते पर हस्ताक्षर किए गए किन्तु उसी रात हृदयरोग के आक्रमण के फलस्वरूप ताशकंद में ही आपका निधन हो गया। युद्धकाल में जिस दृढ़ता एवं साहस से आपने काम किया, शांतिस्थापन में भी उसी लगन एवं निष्ठा से निर्णय किया। स्वतंत्र भारत के महान सपूत के रूप में शास्त्री जी सदैव स्मरणीय रहेंगे।

❑

वैदिक वाङ्मय में स्वतन्त्रता की अवधारणा

- डॉ. धर्मवीर सेठी

15 अगस्त को लाल किले की प्राचीर से राष्ट्रीय ध्वज का आरोहण करते हुए प्रधानमंत्री और 26 जनवरी गणतन्त्र दिवस पर भारत की राजधानी नई दिल्ली के राजपथ पर ध्वजारोहण करती एवं सेना के तीनों अंगों के विभिन्न दस्तों से सलामी लेती हुई राष्ट्रपति को जब देखा तब मन में विचार उठा कि क्या कभी हमारे प्राचीन मनीषियों ने भी इस विषय पर मनन किया था और यदि हाँ, तो उनकी दृष्टि में स्वतंत्रता का क्या अर्थ हो सकता है।

गत वर्ष को जब भ्रष्टाचार, लूट-खसोट, मंहगाई, राजनैतिक अनैतिकता, स्कैम, शिष्टाचार हीनता का वर्ष कहा जाता है तो मन में विचार उठता है कि क्या स्वतन्त्रता का अभिप्राय है (सर्व प्रकारेण) नियन्त्रण हीनता? स्वराज्य अथवा स्वतन्त्रता में होना चाहिए स्व-नियन्त्रण और गणराज्य से अभिप्रेत है गण अर्थात् सामाजिक-नियंत्रण। परन्तु खेद है कि हम अनुशासन, नियम-पालन, न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के निर्देशों को ताक पर रख कर अपने आप को उनसे ऊपर समझने लगे हैं। येन-केन प्रकारेण धनार्जन और ख्याति-प्राप्ति हमारे लक्ष्य बन चुके हैं। शायद इसी कारण देश में त्राहि-त्राहि मची हुई है।

ऐसी स्थिति में यजुर्वेद अध्याय 22 के 22वें मंत्र को उद्धृत करने की इच्छा जागृत होती है जिससे स्वतन्त्रता का वास्तविक स्वरूप ज्ञात हो सके :

ओं आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्।
आ राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्यो ऽतिव्याधी महारथो जायताम्
दोग्ध्रीधेनुर्वोढ़ानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषाजिष्णुरथेष्टा
सभेयोयुवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्
निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्ताम्
योगक्षमो नः कल्पताम्।।

वैदिक ऋचा का हिन्दी भावानुवाद भी प्रस्तुत है :

ब्रह्मन्! स्वराष्ट्र में हों द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों अरिदल विनाशकारी।।
होवें दुधारु गौवें, वृष अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही।।
बलवान् सभ्य योद्धा यजमान पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवें।।
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योगक्षेम-कारी, स्वाधीनता हमारी।।

सर्वप्रथम द्विज अर्थात् राष्ट्रीय नेतृत्व कैसा हो, इसकी चर्चा है। वे तेजस्वी, मनीषी, परमपिता के सच्चे अर्थों में प्रतिनिधि बनकर नेतृत्व करने वाले होने चाहिएँ; क्षत्रिय अर्थात् सेना के तीनों अंगों में ऐसे शक्तिशाली नौजवान हों जो शत्रु समूह को चने चबवा सकें-1965 और 1971 के भारत-पाक युद्ध किसी सीमा तक इसके उदाहरण हो सकते हैं। गौ (माता) की राष्ट्र में रक्षा होनी चाहिए जिससे उनके दुग्ध से राष्ट्र के युवकों का पोषण हो सके। बैल और घोड़े भी शक्तिशाली हों अर्थात् इन शब्दों का प्रतीकात्मक रूप से अभिप्राय है कि देश में पशु-पक्षियों की सर्व प्रकारेण रक्षा हो न कि देश में बाघों को बचाने की मुहिम जारी करनी पड़े।

(21)

राष्ट्र को जीवन्त रखने वाली तो नारी ही होती है जिसे माता की संज्ञा दी जाती है। 'माता निर्माता भवति।' यहाँ तक कि हमारे देश भारत को 'माता' कह कर पुकारा जाता है जैसे 'भारत माता ग्राम वासिनी' या 'भारत माता की जय' आदि। विश्व में शायद ही किसी अन्य देश को 'माता' की संज्ञा प्रदान की जाती हो। इससे भलिभांति अनुमान लगाया जा सकता है कि राष्ट्र की अस्मिता नारी जाति पर निर्भर करती है। उसी ने तो विभिन्न क्षेत्रों में कार्य-रत युवक-युवतियों को जन्म देकर, सही ढंग से लालन-पालन कर इस योग्य बनाया। वही बनाने और बिगाड़ने वाली होती है।

राष्ट्र रक्षक योद्धा बलवान और सभ्य होने चाहिएँ। सन्तति को भी आदर्श बनना होगा। जो बालिका (ओं) का बलात्कार करने वाले होंगे तो राष्ट्र को शर्मिन्दा ही करेंगे। आए दिन ऐसे घिनौने समाचार पढ़कर एक ही प्रश्न मन में उठता है कि हम (राष्ट्रभक्त?) किधर जा रहे हैं।

प्राकृतिक दृष्टि से यद्यपि भारतवासियों को छः विभिन्न ऋतुओं का आनन्द मिलता है परन्तु महत्वपूर्ण है वर्षा का जल। इसीलिए ऋचा कहती है कि बादलों को इच्छानुसार बरसना चाहिए जिससे पानी की कभी भी कमी न हो, सूखा न पड़े, सब प्रकार के ताप दूर हो सकें। ऐसा होने से वनस्पतियाँ भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकेंगी और औषधियां कारगर होंगी।

(शेष पृष्ठ 32 पर)

वैदिक जीवन दृष्टि

- स्वामी प्रबोध चैतन्य

स्वामी प्रबोध चेतन्य जी ने कम्प्यूटर साईंस में बी.ई. की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् अमेरिका के फ्लोरिडा विश्वविद्यालय से फाइनेन्स मैनेजमेंट से एम. बी.ए. की डिग्री प्राप्त की। कुछ दिनों अमेरिका में ही डिस्ने वर्ल्ड में काम करने के पश्चात् वे चिन्मयानन्द मिशन के संपर्क में आये एवं भारत आकर सन्दीपनी साधनालय मुम्बई में चार वर्ष तक वेदान्त एवं संस्कृत का अध्ययन किया। तत्पश्चात् उन्हें संदीपनी साधनालय कैलिफोर्निया का आचार्य नियुक्त किया गया। तब से वे अमेरिका में ही रहकर वेदों के प्रचार में रत हैं।

भारत विकास परिषद् की राष्ट्रीय उपाध्यक्ष डॉ. प्रकाशवती शर्मा चार महीनें तक स्वामी जी के आश्रम में अमेरिका में रहीं एवं उनके प्रवचनों का श्रवण किया। प्रस्तुत आलेख स्वामी जी द्वारा आदि गुरु शंकराचार्य के दर्शन पर दिये गये व्याख्यानों का संक्षिप्त सार है जिसे डॉ. प्रकाशवती जी द्वारा लिपिबद्ध किया गया है।

भगवान आदि शंकराचार्य प्रत्येक भारतीय के लिये प्रातः स्मरणीय तो हैं ही, मानव जाति ऋणी है, उस अवतार पुरुष की जिसने विस्मृति और विकृति के गर्त में डूबते सत्य के उत्कृष्टतम स्वरूप को पुनः प्रतिष्ठित किया। भारत वर्ष का जन-जन उस दिव्यात्मा के चरणों में यदि अपने तन, मन का जर्रा-जर्रा भी समर्पित कर दे तो भी कम है। आज से 1200 वर्ष पूर्व जब देश आध्यात्मिक, धार्मिक सांस्कृतिक और राजनैतिक विघटन के कगार पर खड़ा था तभी इस विलक्षण विभूति ने अवतरित होकर इस देश को आध्यात्मिक नवचेतना दी। हमारे वैदिक साहित्य के सारभूत कहे जाने वाले उपनिषद् जिन्हें वेदों का अन्तिम भाग कहा जाता है-उस पर, भगवान बादरायणा के ब्रह्मसूत्रों पर, तथा श्रीमद्भगवद् गीता पर विशद् भाष्य लिखकर इन ग्रन्थों में सही तौर पर प्रतीयभान विसंगतियों की तो व्याख्या की ही है, साथ ही कितने ही अन्य सहायक प्रकरण ग्रन्थ लिखकर, वैदिक साहित्य को समझने की, उनके अध्ययन की पूर्व पीठिका भी तैयार कर दी है।

उस समय जहां एक ओर पूर्व मीमांसको का कर्मकाण्ड अपनी अतिवादिता पर था तो दूसरी ओर बौद्धों के शून्यवाद ने जीवन के सत्व पर, उसके

लक्ष्य पर ही प्रश्नचिन्ह खड़ा कर दिया था। आमजन दिग्भ्रमित था, हताश था, फलस्वरूप समाज में विघटन होना स्वाभाविक था। जब मानव की आध्यात्मिक नैतिक चेतना अस्थिर होती है तो उसका मनोबल भी क्षीण होता जाता है और तदनुरूप मानव जीवन का प्रत्येक पक्ष-सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक भी क्षीण होकर बिखरता जाता है। ऐसे समय में भगवान शंकराचार्य ने युग पुरुष के रूप में, अवतार पुरुष के रूप में देश को एकता के सूत्र में बांधा। देश की चारों दिशाओं में हमारी श्रद्धा के आध्यात्मिक केन्द्र स्थापित करके देश के भाषायी, एवं प्रान्तीय बिखराव को समेटा। मैसूर में, द्वारिका में, जगन्नाथपुरी तथा बद्रीकाश्रम में मठ स्थापित किये। इन मठों के नाम क्रमशः ऋंगगिरि तथा जहां शारदादेवी की प्रतिमा स्थापित है शारदा मठ, गोर्धन मठ तथा ज्योतिर्मठ् हैं। अनन्य मातृभक्ति, सहृदय, कोमल व्यक्तित्व के धनी भगवान शंकराचार्य मानव दुर्लभ नहीं देव दुर्लभ व्यक्तित्व के धनी थे।

8 वर्ष की आयु में आपात सन्यास लेकर, अष्ट वर्षे चतुर्वेदी द्वादशे सर्वशास्त्रविद्, षोडष कृतवान् भाष्यम् द्वात्रिंशे मुनिरम्याग्रते; ऐसा व्यक्तित्व, व्यक्तित्व की परिच्छिन्नताओं से, सीमाओं से परे भगवद् रूप ही हो सकता है।

आज हम उस भगवद रूप के एक छोटे से, अंश को, उस अंश के प्रकाश की कुछ किरणों को समझने का प्रयास करेंगे। साधना पंचकम नाम से प्रसिद्ध यह रचना शंकराचार्यजी की पंच श्लोकीय रचना है जिसमें वैदिक जीवन शैली, वैदिक शिक्षा, मनुष्य की जीवन यात्रा के विभिन्न पड़ावों का संस्कारित रूप, संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट एवं सुसंगत रूप से रागात्मक शैली में मिलता है। जीवन का दार्शनिक पक्ष, उस तक पहुंचने का व्यवहारिक मार्ग या कहें साधना पथ इतने सुन्दर रूप से इन पांच श्लोकों में समाया है कि विश्वास नहीं होता कि यह मानवीय रचना है।

कर्म, उपासना और ज्ञान वैदिक जीवन शैली के तीनों पक्ष इसमें सन्निहित हैं। पांचों श्लोकों में, प्रत्येक में चार-चार पंक्तियां हैं और प्रत्येक श्लोक में साधना के आठ-आठ अंग व्यवस्थित रूप से क्रमानुसार दर्शाये गये हैं। इतना ही नहीं प्रत्येक पंक्ति में दो-2 अंग समान रूप से वितरित हैं। इस प्रकार कुल (2x4)x5 = 40 साधना अंग पांच श्लोकों में समाविष्ट हैं। गागर में सागर भरा हुआ है।

वैदिक साधना के पांचों सोपान इसमें सम्मिलित हैं तथा-कर्म, उपासना, श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन। हमारे ऋषियों की एक जीवन दृष्टि थी कि मानव जीवन का एकमात्र लक्ष्य मोक्ष है। अतः जीवन के शेष सभी आयाम-धर्म, अर्थ, काम इसी लक्ष्य की पूर्ति में साधन भूत मात्र हैं, अतः गौण हैं। इनमें धर्म का दोहरा रूप सामने आता

है। चारों पुरुषार्थो में उसका सर्वप्रथम स्थान यद्‌च्छया ही नहीं आ गया है अपितु यह अर्थ और काम का नियामक बन कर वहां बैठा है। धर्मपूर्वक अर्थोपार्जन और अर्जित धन से एक और धर्म कमायें, तथा दूसरी ओर कमाये हुए धन का धर्मानुसार ही भोग करें तो जो परमपुरुषार्थ मोक्ष है उसका मार्ग स्वत: ही प्रशस्त हो जायेगा। साथ ही धर्म से पुण्य अर्जित भी होते हैं। साधक सतत्, निरन्तर, एक समान रूचि से उत्साहपूर्वक परमलक्ष्य की प्राप्ति में क्यों और कैसे लगा रहता है–जगत के इतने आकर्षणों और प्रलोभनों के उपरान्त भी–इसका उत्तर है–पूर्वार्जित पुण्यों के कारण। अत: पुण्यार्जन आवश्यक है–इन्हीं पुण्यों की बदौलत उसे ऐसा अनुकूल वातावरण, परिस्थितियां मिली रहती हैं कि वह इस मोक्ष मार्ग के लिये आवश्यक अर्हताऐं सहजता से प्राप्त कर पाता है–ये अर्हताएं साधन चतुष्टय के रूप में विवेक, वैराग्य, शमदमादिष्ट सम्पत्ति तथा मुमुक्षतत्व हैं।

व्यक्ति समाज का अंग है। सामाजिक रूप में, समष्टि में अनुकूलता होगी तभी व्यक्ति भी साधना पथ पर आगे बढ़ सकता है। इस समाज व्यवस्था को बनाये रखने के लिये व्यक्ति की समाज में एक अहं भूमिका होती है, दायित्व होता है। सभी व्यक्ति अपने अपने दायित्वों का, अपनी भूमिका का निष्ठा से निर्वहन करते रहें तभी समाज भी व्यक्ति के विकासार्थ अनुकूल बना रहेगा। बूंद–2 करके सागर बनता है तथा बूंद और कुछ नहीं सागर ही है। व्यक्ति–व्यक्ति मिलकर ही समष्टि बनती है, समाज बनता है और व्यक्ति समाज का ही अंग है। इसी दृष्टि से व्यक्ति की अन्तर्निहित अभिरूचियों, एवं रुझान को देखते हुए समाज ने उन्हें भी तदनुसार वर्गीकृत कर दायित्व निर्धारित किये थे जो वर्ण व्यवस्था कहलाई और पूरा समाज इसी आधार पर चार वर्णों में विभाजित हुआ, यथा–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र। यह वर्ण व्यवस्था जैसा कि नाम से लक्षित होता है व्यक्ति को अपनी अभिरूचियों एवं क्षमताओं पर आधारित थी। वर्ण का अर्थ है रंग अर्थात् उसके व्यक्तित्व का जो वर्ण है उसे उसी के अनुसार कर्म करना चाहिये, जैसे जिनकी रूचि अध्ययन, अध्यापन, ज्ञानार्जन तथा विश्लेषण, मनन आदि की है वे ब्राह्मण कहलाये। समाज और देश की रक्षा, समाज व्यवस्था, देश का शासन तंत्र यह सब क्षत्रिय वर्ग का दायित्व था। इन सभी कार्यों के लिये धन, वैभव, समृद्धि, अर्थ चाहिये–यह कार्य वैश्य वर्ग को सौंपा गया तथा शूद्र का कार्य सभी वर्णों के साथ सहयोग कर अपनी सेवायें देना ही था। इस व्यवस्था में ऊंचे नीचे का भेद नहीं था, साथ ही व्यवस्था जन्मना नहीं थी, कर्मणा थी। सम्पूर्ण व्यवस्था का, वर्गीकरण का एक ही लक्ष्य था–व्यक्ति अपने परम लक्ष्य की ओर सुविधापूर्वक निरन्तर बढ़ता रहे, लक्ष्य ओझल न होने पाये। यह व्यवस्था समष्टि स्तर पर थी।

दूसरी ओर व्यक्ति का अपना जीवन भी निरन्तर उत्तरोत्तर पहले विकसित होता है और फिर क्षय को प्राप्त होने लगता है। एक रूप आयु कभी नहीं रहती यह जगती का सत्य है। प्रत्येक आयु का अपना महत्त्व है और सम्पूर्ण जीवन आयु की विशिष्टता के अनुरूप इस प्रकार नियोजित हो कि प्रत्येक वय का अधिकतम लाभ परम प्रयोजन मोक्ष के हेतु लिया जा सके इसी आशय से सम्पूर्ण जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया गया, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। ब्रह्मचर्य की आयु ज्ञानार्जन की आयु है जिसमें अन्य कोई विपक्ष न रहें साथ ही बालक प्रारम्भ से ही अपने समक्ष अन्तिम पुरुषार्थ रखकर ही सारा अध्ययन, सारी शिक्षा प्राप्त करता रहे। गृहस्थ जीवन के दायित्व परिवार के भरण पोषण के लिये, तथा समाज की स्वस्थ रचना बनी रहे–तदर्थ ही थे। गृहस्थ जीवन का भी एकमेव लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति ही था, गृहस्थ जीवन भी मात्र एक सोपान था उस यात्रा का जिसका लक्ष्य परम पद प्राप्ति था।

और फिर गृहस्थ के दायित्व पूरे होने के बाद वानप्रस्थ की व्यवस्था थी जिसमें वह उपासना कर अपनी यात्रा आगे बढ़ाता था और अन्त में सन्यास था। वानप्रस्थकाल में 75 प्रतिशत समय उपासना में और 25 प्रतिशत अन्य कार्यों में लगे, यही ध्यान रखना होता था। व्यक्ति प्रगति करे, राष्ट्र उन्नत हो, बाधक शक्तियां समाप्त हों और व्यक्ति अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता रहे।

❑

(अगले अंक में समाप्य)

मैं जन्म–मृत्यु एवं वृद्धत्व से रहित आत्मा हूं–ऐसा जो जानता है उसे किसी से भी भयभीत होने का कोई कारण नहीं है।

आदि शंकराचार्य

अपने समय के मालिक बनिए

समय सबके लिए एक समान निर्धारित है–न तो किसी के लिए कम है और न किसी के लिए अधिक, परंतु जो निश्चित समयावधि में अपने कार्य को पूरा कर पाता है, वह समय की न्यूनाधिकता की शिकायत नहीं करता है। इसके लिए आवश्यक है, सही समय की सही पहचान और उपयुक्त समय में उपयुक्त कार्य का नियोजन, यही है समय का प्रबंधन। जो समय का प्रबंधन कर लेता है, वह अपने जीवन का भी प्रबंधन कर लेता है।

माइकल अल्थुसर के अनुसार ''समय उड़ रहा है, यह बुरी खबर है, लेकिन उनके लिए यह शुभ समाचार है, जो इसके पायलट हैं।'' क्योंकि पायलट को पता होता है कि उड़ते हुए समय में कैसे आगे बढ़ना है। किसी ने समय के संदर्भ में ठीक ही कहा है कि

> वक्त एक ऐसा संदूक है, जिसमें केवल 24 घंटे भरे जा सकते हैं। यह कभी खाली नहीं होता है और हर सुबह जब इसे खोला जाता है, तो वही 24 घंटे मिलते हैं। यदि आपने पहले दिन केवल 12 घंटे काम में लिए तो अगले दिन इसमें 36 (आज के 24+कल के शेष 12) घंटे नहीं मिलेंगे, क्योंकि इसमें 24 से कम या ज्यादा घंटे नहीं भरे जा सकते।

समय को अपनी इच्छा के अनुसार न रोका जा सकता है, न तेजी से भगाया जा सकता है और न ही पीछे धकेला जा सकता है। यह जरूर किया जा सकता है कि बीते हुए वक्त को याद किया जाए। लेकिन समय के साथ एक सच्ची बात है कि यदि आपका एक घंटा बीत गया तो यह हमेशा के लिए चला गया होता है, हमेशा के लिए बीत गया होता है, कभी दोबारा लौटकर नहीं आता। वह पीछे की कोई चीख या पुकार नहीं सुनता है और यह सच इतना व्यावहारिक है कि इसे वैज्ञानिक कसौटी पर प्रमाणित करने की भी आवश्यकता नहीं है। सभी का जीवन खुद ही इस बात का प्रमाण है कि हमारे जीवन का बीता हुआ समय, गुजरा हुआ बचपन कभी लौट कर फिर नहीं आता, बस, उसकी याद को ताजा जरूर किया जा सकता है। इस बहुमूल्य संसधान को दुनिया की किसी भी दुकान या बाजार में नहीं खरीदा जा सकता। समय से धन तो पैदा किया जा सकता है, लेकिन धन से समय नहीं खरीदा जा सकता, न ही इसे बचाकर रखा जा सकता है, केवल सही तरीके से इसे काम में लिया जा

सकता है, तो कैसे इसका बेहतर सुनियोजन करें कि यह अपने बहुमूल्य उपहारों से हमें सराबोर करे।

इसके लिए सबसे पहले इस बात पर ध्यान दें कि हरेक व्यक्ति के पास एक साल में 365 दिन या 52 सप्ताह और एक दिन में 24 घंटे अथवा 1,440 मिनट या 86,400 सेकंड का समय होता है, लेकिन 365 दिनों में से केवल वे ही दिन आपके होते हैं, जिनका आप उपयोग करते हैं। बहुत से व्यक्ति हैं, जिनके लिए एक साल एक सप्ताह के बराबर होता है, जबकि कुछ एक सप्ताह में एक साल के बराबर काम कर लेते हैं। असल में असीमित समय का हरेक व्यक्ति को एक निश्चित हिस्सा मिलता है, जिसे वह काम में लेता है। यद्यपि हम सबको वक्त की सख्त जरूरत है, लेकिन बहुत कम लोग इस अनूठे व अमूल्य संसाधन का सही इस्तेमाल करना चाहते हैं। इसे खत्म करने वाले को नुकसान जरूर उठाना पड़ता है। वक्त बरबाद करने का मतलब है किसी ऐसी गतिविधि में समय बिताना, जिसकी अपेक्षा उस समय में एक ज्यादा सार्थक काम किया जा सकता था। जब हमारे पास बहुत सारे काम हों और पर्याप्त समय न हो, तो फिर समय का सही उपयोग करने के लिए केवल यही जानना पर्याप्त नहीं होता कि आपको क्या करना है बल्कि यह जानना जरूरी होता है कि आपको क्या नहीं करना है। हरेक व्यक्ति के कार्य करने की सीमा अलग होती है। अत: मनुष्य को उस काम के लिए अपना समय एवं ऊर्जा बर्बाद नहीं करनी चाहिए जिसे करने के लिए वह योग्य नहीं है। यानी बुद्धिमान वही है, जो अपने उद्देश्यों का चुनाव करना जानता है और सर्वोत्तम को प्राप्त करने की कोशिश करता है।

समय प्रबंधन के कुछ ऐसे सूत्र हैं, जिनका आपको हमेशा ध्यान रखना चाहिए। पहला–अपनी दिनचर्या तैयार कीजिए और उसका पालन सख्ती से कीजिए। **दूसरा**–'टु डू' (यह करना है) लिस्ट बनाकर दैनिक कार्यों को जरूरत के मुताबिक वरीयता दीजिए। **तीसरा**–'टु डू' लिस्ट में केवल उन्हीं कार्यों को सम्मिलित न करें जो आपको करने हैं, बल्कि उनको भी जोड़िए जो आप करना चाहते हैं। **चौथा**–लंबे समय की प्रगति और अपने लक्ष्यों को पूरा करने वाले कार्यों को प्राथमिकता दीजिए; क्योंकि ये कार्य अभी बहुत जरूरी नहीं लगते, लेकिन बहुत जरूरी लगने वाले कार्य कई बार खास नहीं होते। **पांचवां**–घर एवं दफ्तर में हर काम को व्यवस्थित रखने की कोशिश करें; क्योंकि व्यवस्था बनाए रखने के मुकाबले अव्यवस्था में काम करने में ज्यादा समय लगता है। **छठवां**–बीते हुए कल के बारे में सोचने में वक्त बरबाद मत कीजिए। ऐसा अक्सर बुजुर्ग करते हैं। बीते हुए कल को आज का दिन मत निगलने दीजिए। **सातवां**–अपने कार्यों की समय सीमा तय करने की आदत बनाइए।

आठवाँ-इंतजार में बरबाद किए जाने वाले समय का उपयोग करने वाला विकल्प हमेशा पास में रखिए। **नवाँ**-गुजरने वाले हर क्षण के उपयोग के प्रति सजग रहिए।

समय का पालन करने से जीवन में अनुशासन एवं नियमितता का क्रम आता है। इसके पालन करने की प्रेरणा प्रकृति से मिलती है। प्रकृति में सारे जीव-जंतु, वृक्ष-वनस्पति सभी समय से अपने कार्यों को संपादित करते हैं। सूर्य, चंद्रमा, सितारे और उपग्रह, सभी समय का पालन करते हुए अपनी निश्चित कक्षा में चक्कर लगाते हैं। सूर्य निश्चित समय पर पूर्व में उदय होकर पश्चिम में अस्त होता है। इन सबसे प्रेरणा लेकर यदि हम अपने रात्रि में समय पर सोने एवं प्रातः काल उठने के क्रम को व्यवस्थित कर लें और पूरे दिन की कार्य योजना को बनाकर धीरे-धीरे कार्य पूर्ण करते चलें तो जिंदगी के व्यस्ततम समय में भी अपने कार्यों को पूर्ण कर पाएंगे। यदि हम समय पर पौष्टिक भोजन करते हैं तो स्वस्थ रहेंगे। यदि हम समय पर स्कूल, कॉलेज या दफ्तर जाते हैं, तो इसके अनेक तुंरत और लंबी अवधि के फायदे मिलेंगे। दिया गया कार्य समय पर करने से ही हमें इसका फायदा मिलता है।

कार्यालय में समय प्रबंधन का विशेष महत्त्व है। यहां पर इसके पालन से आप काम के माहौल से मिलने वाले तनाव और दबाव से मुक्त रहते हैं। जिस प्रकार समय पर सोने एवं जागने से हमारी कार्य करने की शक्ति एवं प्रभावशीलता बढ़ती है, उसी तरह प्राकृतिक नियमों का पालन करने से व्यक्ति हमेशा खुश, संतुष्ट और इन सबसे बढ़कर विजेता बनता है। यदि आप ऐसा नहीं करते हैं तो आपको तुंरत ही या किसी समय-विशेष में दिक्कतों का सामना जरूर करना पड़ सकता है। जो व्यक्ति अपने जीवन में देर से उठते हैं, उन्हें पूरे दिन तेज चलना होता है। असल में आपको अपनी संपति का नहीं, बल्कि अपने समय का मालिक होना चाहिए। अपने जीवन के उद्देश्यों से बेखबर होकर समय को बरबाद करने वाला जीवन को व्यर्थ गंवाता है। बस, यदि हम अपने समय का सर्वोत्तम उपयोग करते हैं तो इसके अलावा हमें जीवन में और कुछ करने की जरूरत नहीं, सभी उपलब्धियां स्वतः ही मिलती चली जाएंगी।

घड़ी की सुई में सबसे महत्त्वपूर्ण सेकेंड होता है। उसी से मिनट, घंटे और दिन अपने आप घटित होते हैं। हमें भी अपने जीवन के हरेक क्षण का महत्त्व समझना होगा, तो घंटे और दिन अपने आप घटित होते हैं। हमें भी अपने जीवन के हरेक क्षण का महत्त्व समझना होगा, तो घंटे एवं दिन अपने आप सुधरते चले जाएंगे। दिन समय की एक बहुत बड़ी इकाई है, जिसमें रोमन कहावत के मुताबिक 'एक दिन किसी साम्राज्य को डुबो या बचा सकता है।' यदि आप वक्त की छोटी इकाइयों का नियमित उपयोग नहीं करते, तो आखिरी समय में काम बहुत ज्यादा और वक्त बहुत कम रह

जाता है। ऐसे में हम तनाव में आकर काम बिल्कुल नहीं कर सकते। यदि हम अपने कार्यों को निर्धारित समय एवं वरीयता के क्रम के अनुसार करते हैं तो हमें मालूम पड़ता है कि जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए हमारे पास समय शेष है। देर होने की यही सबसे खास वजह है कि आप सोचते हैं कि 'अभी बहुत समय शेष है' और ठीक समय पर कार्य को प्रारंभ नहीं करते।

किसी भी कार्य में सफल होने वाले और असफल होने वाले व्यक्तियों में एक खास बात यह है कि दोनों ने समय का किस तरह से उपयोग किया है? यद्यपि आपकी बनाई गई 'टू डू लिस्ट' में आपके खुद के लिए समय निकालना मुश्किल होता है, लेकिन यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। आपको अपने स्वास्थ्य एवं फिटनेस को भी पर्याप्त समय देना होगा, समय पर भोजन करना, स्वाध्याय के लिए अच्छी पुस्तकें पढ़ना, मनोरंजन करना, हंसने का आनंद लेना आदि भी आवश्यक है, अन्यथा समयाभाव से उत्पन्न समस्या हमारे लिए अतिकष्टकारक सिद्ध हो सकती है।

जीवन में अपनी सामर्थ्य एवं क्षमताओं के सुनियोजन के लिए समय की मांग के अनुरूप नई तकनीकों से भी आपका परिचय होना चाहिए, अगर आप इन्हें नहीं जानते हैं, तो इन्हें सीखना चाहिए। बहुत से ऐसे लोगों के उदाहरण हैं, जिनकी मेहनत में किसी तरह की कमी न होने के बावजूद केवल इस वजह से बेवक्त उन्हें जॉब खोना पड़ा, क्योंकि वे कार्य के दौरान नई तकनीकी सीखने के लिए समय नहीं निकाल पाए थे। इसलिए अपने नित्य के समय में से एक घंटे का समय उन कार्यों को सीखने के लिए दें, जिनकी कमी आपको हमेशा खलती है; जैसे किसी विदेशी भाषा का ज्ञान, किसी तरह की नई विद्या, किसी कौशल का विकास आदि। एक साल भी यदि आप यह अभ्यास नियमित करते हैं तो निश्चित तौर पर आप पारंगत हो जायेंगे।

यदि आप पेशेवर हैं तो केवल भुगतान के बदले में अपने अमूल्य समय को न बेचकर खुद के लिए भी कार्य कीजिए। अपने समय के मुख्य मुद्दों को जानिए और समझिए, अपडेट रहिए और आवश्यकतानुसार अपनी भागीदारी कीजिए।

अतः हमें अपने समय का ऐसा प्रबंधन करना चाहिए, जिसमें कुछ समय अपने लिए, कुछ समय अपने कार्य एवं परिवार के लिए हो। यदि हम समय का सही निर्धारण एवं नियोजन कर सके तो हमारे लिए जीवन का अर्थ ही बदल जाएगा।

संकलित

भारतीय संस्कृति के अनुपम रत्न महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी

– महेश चन्द्र शर्मा

आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व ऐसा समय था जब भारत में शैक्षिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक रूप से जीवन अंधकारमय हो गया था।

हमारे सब धर्म ग्रंथ संस्कृत भाषा में थे जो जनसाधारण की भाषा नहीं थी। इस कारण धर्मग्रंथ में क्या लिखा है, यह वे नहीं जानते थे। इस कारण समाज में अनेक अंधविश्वास और कुप्रथाएं जड़ जमा रही थीं। धर्म का सच्चा और कल्याणकारी स्वरूप लोगों की आंखों से ओझल हो रहा था। विदेशी शासन के कारण युगों से चली आ रही पारिवारिक और सामाजिक मर्यादाएं टूट रही थीं। बच्चे अपने माता-पिता के प्रति कर्तव्य नहीं निभाते थे। धर्म के नाम पर पाखण्ड हो रहा था। विधर्मी अपना धर्म फैला रहे थे। समाज पर अत्याचार हो रहे थे और समाज में निराशा घर कर रही थी। वैष्णवों व शैवों में मनमुटाव बढ़ रहा था। दोनों अपने-अपने इष्टदेव को बड़ा बता रहे थे। इसका मूल कारण अज्ञान ही था।

समाज की इस चिंताजनक स्थिति पर गोस्वामी जी ने गंभीर चिंतन किया। तभी उनके मन में यह प्रेरणा जागी की जन भाषा में रामकथा को लिखा जाय। जो संपूर्ण समाज के लिये रसायन बना और धर्म के प्रति आस्था जागृत हुयी।

गोस्वामी तुलसीदास ऐसे समय में भारतीय संस्कृति के अनुपम रत्न रूपी एक महाकवि के रूप में उभरे जिनकी मान्यताओं को अनेक सम्प्रदायों ने स्वीकार किया है। वास्तव में तुलसीदास ने प्राचीन शास्त्रों में उपलब्ध सामग्री की सहायता से जीव, ब्रह्म, इनके पारस्परिक सम्बन्ध, माया और ब्रह्म इत्यादि के विषय में चिन्तन किया है और फिर उनका स्पष्टीकरण भी प्रस्तुत किया। तुलसीदास ने अपने काव्य के छन्दों में दर्शन के गहन और नीरस विषय को इस सादगी के साथ भर दिया है कि साधारण जनता तक को उनके समझने में कठिनाई नहीं होती। उनके दार्शनिक विचारों को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत देख सकते हैं:-

ब्रह्म–तुलसी के समय में शैव और वैष्णव इन दोनों सम्प्रदायों में बड़ा विरोध था। तुलसीदास ने उन विरोधों का खण्डन करते हुए कहा कि राम और शिव दोनों श्रेष्ठ हैं और दोनों ही एक-दूसरे का सम्मान करते हैं। रामचरितमानस में राम के मुख से कहलवा दिया **''शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर मोह सपनेहु नहीं भावा।''**। इस संसार में ब्रह्म निर्गुण, निराकार, अजन्मा, निर्विकार, सर्वव्यापी, सत्, चित् और आनन्दमय है। पर, जीव ब्रह्म का अंश है-

ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

ईश्वर ही सर्वशक्तिमान है और उसी की कृपा से असम्भव कार्य भी सम्भव होते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश-इन तीनों को तुलसीदास जी समान मानते हैं। इतना ही नहीं, उनके मतानुसार दशरथ-पुत्र राम और निर्गुण राम में कोई अन्तर नहीं। इनके बीच भेदभाव स्थापित करने वाले अज्ञानी और पाखण्डी हैं-**''पाखण्डी हरि पद विमुख, जानहिं झूठ न सांच।''**

निर्गुण और सगुण दोनों को आवश्यक मानते हुए लिखते हैं-

हिय निरगुण नयनहिं सगुण, रसना राम सुनाम।
मनौ पुरत सम्पुट लसत, तुलसी ललित ललाम॥

गोस्वामी जी ने माया के दो रूप लिये-एक विद्या माया और दूसरी अविद्या माया। **विद्या माया सर्जक** है, तो अविद्या माया विनाशक। माया का स्पष्टीकरण करते हुए तुलसीदास जी लिखते हैं-कपट, पाखण्ड, काम, क्रोध, मद, लोभ आदि अविद्या माया की सेना हैं। इनके प्रभाव से ऋषि-मुनि, यहां तक की नारद भी नहीं बच सके। भोले-भाले जीव तो इसकी चंगुल में बड़ी सरलतापूर्वक आ जाते हैं। अभिमान भी अविद्या का ही एक विकृत रूप है, जो मनुष्य में 'मद' जाग्रत करता है। इस अविद्या माया से केवल राम ही बचा सकते हैं-

माधव अस तुम्हारि यह माया।
कर उपाय पचि गरिय तरिय नहिं जब लगि करहुं न दाया।

भक्ति–माया के बन्धन से मुक्त होने के जो विभिन्न साधन-तप, ज्ञान, वैराग्य, कर्म, उपासना आदि बताये गये हैं, उनमें सर्वप्रमुख ज्ञान और भक्ति ही है। ज्ञान जहां कठिन है, वहीं भक्ति-मार्ग सर्वजन-सुलभ है। भक्ति के पांच भाव-**शान्त, सख्य, दास्य, वात्सल्य** और **माधुर्य** माने गये हैं, लेकिन तुलसीदास जी दास्यभाव को ही सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। उनका कहना है कि-**''सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि''**

सर्वजन-सुलभ होने के कारण यह मार्ग सर्वश्रेष्ठ है। यद्यपि भक्ति मे मन के रम जाने में भी ईश्वर की कृपा आवश्यक है। यदि ईश्वर की कृपा नहीं होगी, तो जीव इस संसार-सागर में भटक जाएगा। इसलिए वे लिखते हैं कि-

मेरो मन अरजू हठ न तजै।
हौं हार्‌यो करि जतन विविध विधि नेकु न मढ़ लजै।
तुलसीदास तब होई स्वबस जब प्रेरक प्रभु बरजै।

पवित्र मन से ईश्वर की आराधना करने पर ईश्वर कृपा की प्राप्ति होती है। तुलसी की दास्य-भावना के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण विनय-पत्रिका में दर्शनीय हैं।

जीव और जगत्-जीव को गोस्वामी जी ने मन, प्राण और बुद्धि से प्रथम माना है। वह पूर्णत: एवं चैतन्य है। विकारी वस्तुओं के सम्पर्क में आने के कारण निर्विकार जीवन भी विकार-ग्रस्त बन जाता है। इसलिए वह माया के इशारे पर नाचता है। वह ईश्वर का साथी भी है-**''ब्रह्मजीव सम सहज संघाती।''** लेकिन, जीव कभी ब्रह्म नहीं बन सकता। उसे ईश्वर के द्वारा संचालित होना पड़ता है। कर्मों के द्वारा उसे संसार-सागर में आवागमन से मुक्ति मिल सकती है। अपने कर्मों का फल उसे भुगतना ही पड़ता है-**''जो जस करइ सो तस फल चाखा।''**

तुलसीदास के अनुसार जीवन आत्मा का कर्त्तव्य क्षेत्र है जिसमें उसे भगवान् की सेवा करनी चाहिए। जिन्होंने भगवान राम को नहीं पहचाना, उनके लिए जीवन दु:ख भरा है।

तुलसीदास जी के अनुसार अद्वैतवाद ही चरम ज्ञान का निष्कर्ष है। पर, वह एक आदर्श रूप है। जीव इस चरम ज्ञान की स्थिति में सदैव नहीं रहता। अत: लोकजीवन के व्यावहारिक दृष्टिकोण से ईश्वर और जीव अलग हैं। इस दृश्य जगत् में जड़ और चेतन दो तत्त्व हैं, जिनमें जगत् जड़ है और जीव चेतन है। इन जीवों की विभिन्न योनियां हैं। मानव-जीवन ही सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि इसी जीवन में जीव कर्म कर सकता है, बाकी सभी योनियों में वह अपने कर्मों का फल भुगतता है। इसलिए मानव-जीवन का मुख्य लक्ष्य ईश्वर की भक्ति ही होनी चाहिए। विदेशियों के शासन काल और वर्तमान काल में भी रामचरितमानस ने हिन्दू धर्म और समाज की रक्षा की है। डेढ़ सौ वर्ष पहले बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश से हजारों लोग मजदूरी करने मॉरिशस, ट्रिनिडाड, सूरिनाम, गुयाना आदि देशों में गए थे। वे अपने साथ रामचरितमानस को ले गए। इसी ग्रंथ ने उन्हें विदेश में रहने की तथा धर्म परिवर्तन के कुचक्र से बचने की प्रेरणा और हिम्मत दी।

धर्म, ईश्वर, जीव, प्रकृति और माया आदि मान्यताओं को लेकर तुलसीदास ने हरि प्राप्ति के साधनों पर प्रकाश डाला है। इनके अनुसार दास्यभक्ति ही राम की प्राप्ति का सर्वोचित माध्यम है। राम और धर्म के प्रति आस्था प्रकट करने के बाद भी गोस्वामी जी की दृष्टि जनकल्याणी और विश्वव्यापी है। अत: यह कहना उचित होगा कि **''सर्वे भवन्तु सुखिन:''** ही उनकी विचारधारा थी और राम की भक्ति ही उनकी दार्शनिक आस्था थी।

❑

रक्षक कवि थे तुलसी

धर्म और राजनीति का रिश्ता बिगड़ गया है। धर्म दीर्घकालीन राजनीति है और राजनीति अल्पकालीन धर्म। धर्म श्रेयस की उपलब्धि का प्रयत्न करता है, राजनीति बुराई से लड़ती है। आज हम एक दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में है, जिसमें कि बुराई से विरोध की लड़ाई में धर्म का कोई वास्ता नहीं रह गया है और वह निर्जीव हो गया है, जबकि राजनीति अत्यधिक कलही और भ्रष्ट हो गई है।

दृष्टि गहरी और व्यापक हुए बिना न आनंद मिलता है, न समझ। तुलसी की रामायण में आनंद के साथ-साथ धर्म भी जुड़ा है। तुलसी की कविता से निकली है अनगिनत रोज की उक्तियां और कहावतें, जो आदमी को टिकाती हैं और सीधे रखती हैं। साथ ही, ऐसी भी कविता है जो एक क्षणभंगुर धर्म के साथ जुड़ी हुई है जैसे शूद्र या नारी की निंदा।

तुलसी महान हैं, यह कहना अनावश्यक है। जरूरत है, बताने की उन चीजों को जिनमें उनकी महत्ता फूटती है। तुलसी एक रक्षक कवि थे। जब चारों तरफ से अझेल हमले हों, तो बचना, थामना, टेक देना, शायद ही तुलसी से बढ़कर कोई कर सकता है। आनंद, प्रेम और शांति का आव्हान तो रामायण में है ही, पर हिन्दुस्तान की एकता जैसा लक्ष्य भी स्पष्ट है। सभी जानते हैं कि राम हिन्दुस्तान के उत्तर-दक्षिण की एकता के देवता थे, कि पूर्व-पश्चिम की एकता के देवता थे कृष्ण और कि भारतीय भाषाओं का मूलस्रोत रामकथा है। कंबन, एकनाथ, कीर्तिवास की रामायण और ऐसी ही दूसरी रामायणों ने अपनी-अपनी भाषा को जन्म और संस्कार दिया।

– लीला विसारिया

भारत में पहली जनगणना 1867 से 1872 के पांच वर्षों के बीच हुई थी, जिसे 1872 की जनगणना भी कहा जाता है और इसीलिए इसे समकालिक नहीं माना जाता। यह मशक्कत ब्रिटिश शासकों ने यह जानने के लिए कराई थी कि उनके उपनिवेशों का आकार, रचना अथव जनसंख्या की विशेषताएं क्या हैं, परंतु यह गणना समूचे ब्रिटिश नियंत्रित क्षेत्र में नहीं की गई थी। तदंतर होने वाली जनगणनाएं समकालिक थीं और शनैः शनैः उनका प्रचार-प्रसार पूरे देश में क्रमिक रूप से किया जाता था। राजनीतिक और अन्याय समस्याओं के बावजूद भारत में प्रत्येक दस वर्ष के अंतराल में जनगणना होती है।

स्वतंत्रता के उपरांत, संसद में पारित 1948 के जनगणना अधिनियम के तहत एक जनगणना आयुक्त के पद का सृजन किया गया। इससे पूर्व, समूचा अभियान 2-3 वर्षों के लिए अस्थायी रूप से आयोजित किया जाता था और जनगणना पूरी होने तथा निष्कर्षों के प्रकाशित होने के बाद समूची व्यवस्था भंग कर दी जाती थी। कानून ने जनगणना अधिकारियों को कुछ प्रश्न पूछने का अधिकार दिया था, जिसका उत्तर देना नागरिकों के लिए अनिवार्य था। इस तरह एकत्रित सूचना को गोपनीय माना जाता है और उनका उपयोग केवल सांख्यिकीय कार्यों के लिए ही हो सकता है। इसे किसी न्यायालय में प्रमाण के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

जनगणना केवल लोगों की गिनती भर नहीं होती, भारत की जनगणना में आयु और महिलाओं का प्रतिशत/अनुपात जैसी जनसंख्या की विशेषताओं, धर्म, साक्षरता, भाषा एवं स्थान परिवर्तन जैसे सामाजिक-सांस्कृतिक कारक तथा आर्थिक गतिविधियों का विवरण भी एकत्रित और प्रकाशित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, जनसंख्या की गणना के एक वर्ष पूर्व की जाने वाली आवासीय गणना में आवास का प्रकार, सुविधाएं और परिवारों की परिसंपत्तियों की सूचना भी एकत्रित की जाती है। विभिन्न जनगणनाओं के आंकड़ों के विश्लेषण से देश की जनसंख्या के विविध पहलुओं, व्यक्तियों के परस्पर व्यवहार के तौर-तरीकों तथा प्रवृत्तियों को समझने में मदद् मिलती

है।

विकासशील देशों में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जहां प्रत्येक दस वर्ष के अंतर पर निर्बाध रूप से जनगणना होती रही है। किसी अन्य विकासशील देश में ऐसा नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त, भारत में जनगणना की प्रक्रिया पूरी होने के तीन-चार सप्ताह के भीतर ही प्रत्येक राज्य की जनसंख्या का लिंगवार विवरण जारी कर दिया जाता है। वर्ष 1981 तक जनगणना के आंकड़ों का संकलन हाथों से होता था। 1981 से सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों से 7 वर्ष और उससे अधिक आयु के साक्षर और निरक्षर पुरुषों और स्त्रियों का विवरण एक माह के भीतर ही जारी कर दिया जा रहा है। समूची प्रक्रिया का कंप्यूटीकरण हो जाने से 2011 की जनगणना के सभी आंकड़े 2 वर्ष के भीतर उपलब्ध करा दिए जाएंगे। यह देखते हुए कि अनेक उन्नत और विकसित देशों को जनगणना पूरी होने के बाद समस्त आंकड़ों को जारी करने में बरसों लग जाते हैं, भारत की इस उपलब्धि की सराहना की जानी चाहिए।

जनगणना २०११ की महत्त्वपूर्ण बातें–जनसंख्या का आकार

जनगणना पूरी होने के चार सप्ताह के भीतर जारी जनसंख्या के अस्थायी आंकड़ों के अनुसार भारत की कुल आबादी 1 अरब 21 करोड़ हैं, जो जनगणना 2001 की जनसंख्या 1 अरब 3 करोड़ से अधिक है। इस प्रकार, पिछले एक दशक में 18 करोड़ 10 लाख लोग और जुड़े हैं। परन्तु 2010-11 के दशक में जनसंख्या की वृद्धिदर कुल 17.6 प्रतिशत रही जबकि 1991-2001 के दशक में 21.5 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई थी। इससे स्पष्ट होता है कि जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट आई है। मज़े की बात यह है कि जितनी बड़ी जनसंख्या की गणना की गई है वह अनुमानित आकार से कहीं अधिक है। महापंजीयक कार्यालय ने अनुमान लगाया था कि 2011 की जनसंख्या 1 अरब 19 करोड़ की होगी। आशा है कि अनुमानित समय से पूर्व ही भारत चीन को पीछे छोड़ते हुए 2030 तक विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या वाला देश बन जाएगा। आशा है 2041 तक भारत की जनसंख्या 1 अरब 41 करोड़ पर जाकर स्थिर हो जाएगी।

भौगोलिक वितरण

उत्तर प्रदेश 19 करोड़ 96 लाख की जनसंख्या के साथ देश का सबसे अधिक आबादी वाला राज्य है। देश की कुल जनसंख्या का 16.5 प्रतिशत लोग इसी राज्य में निवास करते हैं। बिहार (10 करोड़ 80 लाख) और महाराष्ट्र (11 करोड़ 24 लाख), दस करोड़ से अधिक की जनसंख्या वाले देश के दो अन्य राज्य हैं। पश्चिम बंगाल

9 करोड़ 10 लाख, आंध्र प्रदेश 8 करोड़ 50 लाख, मध्य प्रदेश 7 करोड़ 30 लाख और तमिलनाडु 7 करोड़ 20 लाख की जनसंख्या के साथ देश के अन्य बड़े राज्य हैं। लगभग 42.4 प्रतिशत भारतीय पूर्व में अविभाजित बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और राजस्थान में रहते हैं। जनगणना 1991 की तुलना में इस क्षेत्र की जनसंख्या में 40 प्रतिशत वृद्धि हुई है। इसके विपरीत, केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के चार दक्षिणी राज्यों में जनसंख्या का प्रतिशत 1991 के 22.5 प्रतिशत की तुलना में 2011 में 20.8 प्रतिशत ही रह गया है। इससे संसदीय लोकतंत्र में उनके प्रतिनिधित्व को लेकर चिंता व्यक्त की जा रही है।

जनसंख्या वृद्धि की दर

प्रमुख राज्यों में 2001-2011 की अवधि में 25.1 प्रतिशत की वृद्धि दर के साथ बिहार सबसे तेजी से बढ़ने वाला राज्य है। दशकीय वृद्धि दर सभी प्रमुख उत्तरी राज्यों-बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश (झारखंड और छत्तीसगढ़ समेत) में 20 प्रतिशत की दर से आगे निकल गई है। केरल में 2001-2011 के दौरान 4.9 प्रतिशत की वृद्धि दर इस बात की ओर संकेत करती है कि अगले 10-20 वर्षों में राज्य की जनसंख्या दर में स्थायित्व आ जाएगा। पंजाब, आंध्रप्रदेश और पश्चिम बंगाल की वृद्धि दर 11-13 प्रतिशत के आस-पास रही है, जबकि कर्नाटक, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में वृद्धिदर पर 15-16 प्रतिशत के लगभग रही है। दक्षिणी राज्य जनसंख्या में स्थिरता के अग्रदूत बनकर उभरे हैं।

साक्षरता

भारत ने साक्षरता के विस्तार के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। स्वतंत्रता के बाद हुई पहली जनगणना में कुल 18 प्रतिशत की साक्षरता की तुलना में 2011 में भारत की साक्षरता का प्रतिशत 74 तक जा पहुंचा है। पुरुषों की उपलब्धि 27 से 82 प्रतिशत तक रही है जबकि महिलाओं की साक्षरता के मामले में उन्हीं 60 वर्षों में साक्षरता का प्रतिशत 65.5 प्रतिशत पहुंच गया है। जनगणना 1951 के अनुसार तब केवल 10 प्रतिशत महिलाएं ही साक्षर थीं। आज प्रत्येक तीन में से दो महिलाएं साक्षर हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर, साक्षरता के मामले में लिंगानुपात (स्त्री एवं पुरुष की साक्षरता का अनुपात) की खाई सर्वप्रथम 1991 में कम होनी शुरू हुई और उसके बाद तो इसमें काफी तेजी आ गई है। परन्तु स्त्री-पुरुष की साक्षरता का अंतर, कई राज्यों में राष्ट्रीय अनुपात से भी अधिक है। राजस्थान में जहां दोनों के बीच लगभग 28 प्रतिशत

का अंतर है, वहीं बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड जैसे उत्तरी राज्यों में स्त्री-पुरुष साक्षरता के अंतर का प्रतिशत 20 से भी अधिक है।

2001 की तुलना में 2011 में पुरुष साक्षरता दर में 6 प्रतिशत की वृद्धि बर्ज की गई, जबकि महिला साक्षरता दर में 12 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। इसे एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि कहा जा सकता है। कुछ लोग इस सफलता का श्रेय सर्वशिक्षा अभियान को देते हैं जिसकी शुरुआत 2001-02 में प्राथमिक शिक्षा को लोकव्यापी बनाने के लिए की गई थी। पुरुष साक्षरता का प्रतिशत पूरे देश में 75 प्रतिशत से भी अधिक है, जबकि केरल और कुछ अन्य छोटे राज्यों में यह 90 प्रतिशत से भी अधिक है। जिन राज्यों की स्थिति चिंताजनक है-वे हैं राजस्थान और आंध्रप्रदेश, दोनों राज्यों में 2001-2011 की अवधि में कुल 8 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है और दोनों ही राज्यों में महिला साक्षरता का प्रतिशत 60 से भी कम है।

जनसंख्या का लिंगानुपात

सुखद समाचार यह है कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं की जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। 1991 में 1000 पुरुषों के मुकाबलें कुल 927 महिलाएं थीं और 2001 में 933, जबकि अब 2011 में, प्रति 1000 पुरुषों के मुकाबलें में महिलाओं की संख्या 940 क पहुंच गई है। तथापि, विश्व के अधिकतर देशों की तुलना में भारत में लिंगानुपात असामान्य है। ब्रिटेन के जनगणना आयुक्तों का ध्यान भी इस ओर गया है और वे इसे लेकर उलझन में थे। बड़े वैज्ञानिक ढंग से उन्होंने उन कारणों पर गौर किया, जिनके कारण भारत की कुल जनसंख्या में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या कम है। उन्होंने और कुछ अन्य जनसंख्या विशेषज्ञों ने जिन कुछ संभावित कारणों पर विचार किया, वे हैं-महिलाओं की सही संख्या की गिनती का न होना, अन्य जनसंख्याओं की तुलना में, जन्म के समय पुरुषों का अधिक अनुपात होना, लापरवाही घातक बीमारियों और महामारियों (जैसे प्लेग, मलेरिया और इन्फ्लुएंजा) के कारण पुरुषों की तुलना में महिलाओं की मृत्युदर का अधिक पाया जाना तथा कच्ची उम्र में सहवास और अकुशल दाइयों द्वारा प्रसव कराया जाना। महिलाओं को शैशवकाल से ही अस्तित्व की रक्षा संबंधी जिन अलाभकर स्थितियों से गुजरना पड़ता है, उनको छोड़कर, अन्य किसी कारण के समर्थन में कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

हरियाणा, पंजाब, चंडीगढ़ और दिल्ली के परस्पर सटे हुए क्षेत्रों में ऐतिहासिक रूप से पुरुषों की तुलना में महिलाओं के अनुपात में जो अंतर पाया जाता रहा है, उसमें 2001 से 2011 की अवधि में सुधार हुआ है। परंतु यह अभी भी 1000 पुरुषों के मुकाबले 900 की संख्या से कम ही है। दूसरी ओर केरल, तमिलनाडु ओर आंध्र प्रदेश

के दक्षिणी राज्यों में लिंगानुपात लगभग समान ही है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से चली आ रही यह विशेषता अभी भी जारी है।

बाल लिंगानुपात

1981 से भारत सरकार जनगणनाओं में 0–6 की आयु समूह की जनसंख्या के आंकड़े लिंग के आधार पर भी उपलब्ध कराती रही है। यह साक्षरता दर की सूचना के सह–उत्पाद के रूप में एकत्रित की जाती रही है। साक्षरता दर की गणना 7+ की आयु से की जाती है। 0–6 आयु समूह के बच्चों की गणना में लिंगानुपात की गणना की जाती है (आमतौर पर आयु संबंधी आंकड़े पांच वर्ष की आयु समूह के एकत्रित किए जाते हैं इसीलिए अधिकांश जनसंख्याओं में बच्चों संबंधी आंकड़े 0–4 के आयु समूह के मिलते हैं, 0–6 आयु वर्ग के नहीं।) जनगणना आयुक्त कार्यालय ने 0–6 आयु वर्ग के बच्चों के लिंगानुपात की गणना के साथ–साथ 1961 तथा 1971 से लेकर 50 वर्षों की प्रवृत्ति को भी विवेचना की है।

बाल लिंगानुपात में 1961 से ही क्रमिक रूप से गिरावट दर्ज की जा रही है। 1961 में जहां 1000 बालकों के पीछे 976 बालिकाएं थीं, वहीं उनके अनुपात में और कमी आते हुए 2001 में 927 तथा 2011 में तो 914 लड़कियां ही प्रति 1000 बालकों के पीछे रह गई। इस स्थिति ने पूरे विश्व का ध्यान आकर्षित किया है और इसके पीछे जो कारण मुख्य रूप से बताया जा रहा है, वह है भ्रूण लिंग परीक्षण की बढ़ती प्रवृत्ति और बालिका भ्रूणों का चुनिंदा तौर पर गर्भपात। 2001 से 2011 के बीच लगभग पूरे देश में ही बाल लिंगानुपात में गिरावट की प्रवृत्ति रही, जिससे इस विश्वास की पुष्टि होती है कि बालिका–भ्रूण का चुनिंदा तौर पर गर्भपात करवाने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। यह प्रवृत्ति उन क्षेत्रों में भी फैल गई है जहां पहले नहीं पाई जाती थी। हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और पंजाब में 2001 की तुलना में 2011 में बाल लिंगानुपात में कुछ सुधार हुआ है। गुजरात में भी मामूली सुधार दर्ज किया गया है। इन राज्यों में बाल लिंगानुपात 850 से भी कम था। इन राज्यों में अभी भी 2011 में, प्रति 1000 बालकों की तुलना में 900 से कम महिलाएं हैं।

पुरुष प्रधान भारतीय समाज में सदियों से बेटे को वरीयता दी जाती रही है और यह प्रवृत्ति अभी बनी हुई है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस) के 2005–06 के सर्वेक्षण के अनुसार लगभग एक चौथाई महिलाएं बेटियों की अपेक्षा बेटों को पसंद करेंगी, परन्तु ऐसी शायद ही कोई महिला होगी जो बेटों की अपेक्षा अधिक बेटियां पसंद करेंगी। इसके अतिरिक्त, एनएफएचएस के गहन विश्लेषण से पता चलता है कि जब कोई दंपत्ति केवल दो या तीन बच्चों तक अपना परिवार सीमित

करना चाहता है और यदि उसका पहला बच्चा बेटी है तो दूसरे बच्चे का भ्रूण परीक्षण कराने और यदि भ्रूण में लड़की पाई गई तो गर्भपात की संभावना बढ़ जाती है। इस प्रकार छोटे परिवार की स्वीकार्यता में वृद्धि के बावजूद बेटे की वरीयता बनी हुई है।

लिंग परीक्षण के लिए प्रसवपूर्व जांच तकनीक की सर्वत्र उपलब्धता को देखते हुए उस पर नियंत्रण लगाने के आशय से 1994 में पीएनडीटी (प्रसवपूर्व निदान तकनीक–नियमन एवं दुरुपयोग से बचाव)–अधिनियम पारित किया गया। इस कानून के तहत भ्रूण के लिंग परीक्षण और उसे माता–पिता के बताने पर रोक लगा दी गई। अधिनियम में 2003 में संशोधन कर उसे और सख्त बनाया गया। संशोधित प्रावधान के अनुसार किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी भी स्थान पर कराए गए चुनिंदा लिंग परीक्षण के विरुद्ध कार्रवाई के लिए जिला स्तर पर उपयुक्त अधिकारियों को अधिकार सौंपे गए हैं। इस अधिनियम और 'बालिका बचाओ' के व्यापक अभियान के बावजूद बाल लिंगानुपात में गिरावट जारी है जिससे यह चिंता बलवती होती जा रही है कि न तो कानून का क्रियान्वयन और न ही अभियान के संदेश का कोई विशेष प्रभाव पड़ा है।

परंतु यह बात भी माननी होगी कि बालिका भ्रूण के चुनिंदा गर्भपात के साथ–साथ भारत में दशकों से बालकों के मुकाबले बालिकाओं की मृत्युदर अधिक रही है। हाल के वर्षों में भी 2008 के नमूना पंजीकरण प्रणाली के आंकड़ों के अनुसार, 1–4 वर्ष की आयु की बालिकाओं की मृत्युदर बालकों की तुलना में 40 प्रतिशत अधिक थी। यदि मृत्युदर में भी लड़कों के प्रति उदारता और लड़कियों के साथ पक्षपात होता रहेगा तो आने वाले समय में लड़कियों की कमी बनी रहेगी। उच्च बालिका मृत्युदर और बालिका भ्रूण का चुनिंदा गर्भपात का जोड़ बना रहता है तो लड़कियों की कमी की समस्या निश्चय ही और तेजी से बढ़ती रहेगी।

बाल जनसंख्या में गिरावट

वर्ष 2011 की जनगणना, कई दशकों में ऐसी पहली जनगणना है, जिसमें 0–6 आयु समूह के बच्चों की संख्या में कुछ कमी पाई गई। जनगणना 2001 में जहां 16 करोड़ 40 लाख बच्चों की गणना हुई; अर्थात् भारत में 50 लाख कम बच्चे थे। यह समूची जनसंख्या में बच्चों की अंशधारिता से स्पष्ट है, जो 2001 में 16 प्रतिशत से गिरकर 2011 में 13.1 प्रतिशत पर आ गई है। प्रमुख राज्यों में केवल बिहार और जम्मू–कश्मीर ही ऐसे अपवाद हैं जहां बच्चों की जनसंख्या में कुछ वृद्धि हुई है। केरल और तमिलनाडु में कुल जनसंख्या का 10 प्रतिशत अंश 0–6 आयु वर्ग के बच्चों का है। परंतु राजस्थान, जम्मू–कश्मीर, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और बिहार में कुल जनसंख्या में बच्चों का अंश लगभग 18 प्रतिशत है। बच्चों की संख्या में कमी से

उर्वरता में आई कमी का पता चलता है। भारत में समग्र उर्वरता दर में भी कमी आई है। 2001 में जहां प्रति महिला बच्चों का औसत 3.1 था, वहीं 2009 में प्रति महिला बच्चों का औसत 2.7 रह गया।

जनसंख्या विशेषज्ञों के लिए 2011 की जनगणना के अस्थायी निष्कर्ष कुछ चौंकाने वाले तथ्य लेकर आए हैं। जनसंख्या के आकार के बारे में जो ज्यादातर पूर्वानुमान लगाए गए थे, वास्तविक गणना उससे अधिक रही। जनसंख्या में स्थिरता आने वाली समयावधि का अनुमान भी गलत निकला। इससे यह भी संभावना जताई जाने लगी है कि भारत एक दशक या उससे अधिक के पूर्वानुमान के पहले ही 2030 तक चीन को जनसंख्या के मामले में पीछे छोड़ देगा और इससे बचने का कोई उपाय नहीं है। यद्यपि नीति-निर्माता, नियोजक और कार्यक्रम प्रबंधक सभी समय-समय पर इस बारे में घबराहट भरी चिंता व्यक्त करते रहे हैं। गर्भधारण आयु में प्रवेश करने वाले युवाओं की प्रवृत्ति बड़े परिवार से छोटे परिवार की ही ओर बढ़ रही है।

लिंग परीक्षण पर 15 वर्षों के प्रतिबंध के बावजूद बाल लिंगानुपात में गिरावट की प्रवृत्ति जारी रहने से हमें गंभीरता से यह अहसास होता है कि सामाजिक कानून केवल एक सीमा तक उद्देश्य पूरा करते हैं या यों कहा जाए कि दंड का भय भी ज्यादा काम नहीं आता। यही समय है जब हम उन सांस्कृतिक और सामाजिक कारणों पर गौर करें जो लड़कियों को कमतर बनाते हैं। व्यावहारिक परिवर्तन लाना एक कठिन कार्य है परंतु है अति आवश्यक।

❑

(पृष्ठ 42 का शेष...)

मन्त्र के अन्तिम दो शब्द 'योग क्षेम' अत्यन्त सारगर्भित हैं। राष्ट्रहित के लिए जिस वस्तु की कमी हो उसे प्रयत्नपूर्वक ग्रहण करना (योग) और जो भी कल्याणकारी हमें प्राप्त हो चुका है उसकी सम्यक् भाव से रक्षा करना (क्षेम), न कि अपने देश के गोपनीय रहस्यों को चन्द सिक्कों के लिए दूसरे देशों को बेच देना अथवा भ्रष्टाचार के माया जाल में ऐसे फंसना मानों देश की चिन्ता ही न हो।

बड़े अभिमान से हमने अपना 64वाँ स्वतन्त्रता दिवस मनाया परन्तु क्या हमारी स्वतंत्रता वेद-विहित कसौटी पर खरी उतरती है? समय आ गया है इस पर पुनर्विचार करने का, 'मन्त्र द्रष्टारा:' ऋषियों का आशीर्वाद प्राप्त करने का क्योंकि हमारे आर्यावर्त के पास वैदिक साहित्य की धरोहर है।

ए०टी०एम० मशीन किसने बनाई?

- डॉ. तासुम आरिफ

एटीएम का अर्थ होता है ऑटोमेटेड टैलर मशीन। टैलर का सामान्यत: अर्थ क्लर्क या कैशियर होता था। एटीएम का जन्म सेल्फ सर्विस की धारणा के साथ हुआ है, जिससे काम आसान हो और अनावश्यक कर्मचारियों को न लगाना पड़े। इस मशीन के आविष्कार का श्रेय आर्मेनियाई मूल के अमेरिकन लूथर जॉर्ज सिमियन को मिलना चाहिए। यों इसके विकास में कुछ और लोगों का भी हाथ है।

लूथर जॉर्ज तेज दिमाग वाला आविष्कारक था। एटीएम की परिकल्पना उसने 1939 में ही कर ली थी और बैंकमैटिक नाम से एक मशीन बनाई। पर जिसे भी उसने इसे दिखाया किसी को उसका इस्तेमाल समझ में नहीं आया। बैंक तो अपने कैश को लेकर जोखिम उठाना ही नहीं चाहते थे। बहरहाल वह अपनी मशीन का विकास करता रहा और 30 जून, 1960 को उसने इसका पेटेंट फाइल किया। फरवरी, 1963 में उसे पेटेंट मिल भी गया। इस बीच उसने सिटी बैंक ऑफ न्यूयॉर्क (आज का सिटी बैंक) के अधिकारियों को इस बात के लिए राजी किया कि वे इस मशीन को परीक्षण के तौर पर लगाकर देखें।

सिटी बैंक ने छह महीने के ट्रायल पर मशीन लगाई, पर उसे लोकप्रियता नहीं मिली। लोग उसके बजाय खिड़की के पीछे बैठे टैलर पर ज्यादा भरोसा करते थे। मशीन से पैसा निकालने का काम आमतौर पर वेश्याएं या जुआरी करते थे, जो टेलर से रूबरू होना नहीं चाहते थे। बहरहाल टैलर मशीन की जरूरत जापान में सबसे पहले पड़ी। वह भी क्रेडिट कार्ड के बढ़ते इस्तेमाल के कारण। 1967 में लंदन में सबसे पहले जो मशीन लगी उसका श्रेय मिला भारत में जन्मे स्कॉटिश इनवेंटर जॉन शेफर्ड बैरन को। 27 जून, 1967 को लंदन के बार्कलेज बैंक ने अपनी इस मशीन की घोषणा की। इसके आविष्कारकर्ता जॉन शैफर्ड को 2005 में इंग्लैंड का प्रतिष्ठित सम्मान ऑर्डर ऑफ ब्रिटिश एंपायर दिया गया।

q

Gandhi Jayanti

Bapu's Theory of Seven Sins

- K. S. N. Murthy

Wealth Without Work :

Making a fast buck has made people resort to illegal means. Corruption is at a high key. Enticing the common man by luring, lucrative offers and deceiving him ultimately is the order of the day. In order to enrich themselves nobody is shivering on the brink to commit any kind of crime.

Pleasure Sans Conscience

Indulging in scandals and minting money is the prevailing trend. In earning thus, they suppress their conscience and enjoy with the ill-gotten money. They become guiding stars in advocating the principle 'be generous at other's purse.'

Knowledge Sans Character :

Knowledge comes out of education. Now education has become an expensive commodity. The managements are competing only for the ranks. The students are made to masticate hundreds of pages and are devoid of their independent thinking. The academic standards have gone down The teacher-pupil relation has undergone a sea change. The management used to select the students, now the students select the management. The teacher used to care for the student-now the student does not care for the teacher. The teacher used to evaluate the student-now the student evaluates the teacher.

The student used to respect the teacher- now the teacher fears and as such, fawns on the student. Does this kind of education, where knowledge outstrips wisdom, promote culture and character in a student?

Culture has become obsolete and character has lost its meaning. What is fragrance to a flower, humility is to character and now

humility has become a rarity. Education is job-oriented, not character building.

The entrepreneurs expressed their reverence towards the teacher by naming an alcohol after 'teacher's 50'. No student agitates for the same, but for flimsy and absurd reasons. The students display their integration and adopt the tool of lightning striks.

The teachers then had the zeal for teaching and zest for research - now teaching and research have become saleable commodities. The teachers then had parental care while the present day teachers have carnal care of their students. Reading moral stories, biographies, etc. by the younger generation have almost disappeared and they are the victims of the lure of lucre.

Commerce Without Morality :

Bapu, you commented that "A customer is the most important visitor on the business premises".

Now the custom in commerce is to deceive him by offering duplicate commodities. Technology is being used in commerce by attracting public through luring internet mails and draining the bank accounts of the public. Black marketing is at its zenith and is being done in broad day light.

Most financial institutions are dragging the common man into a debt trap. Circulation of fake currency is abundant.

Science Without Humanity :

Science and technology have developed leaps and bounds, but the milk of human kindness has dried up. Scientists are more concentrating on the possibility of livelihood on other planets by wondering how to conserve the natural resources on the earth. Public is not bothered about the environment. The results of scientific discoveries should help the common man. Now-a-days science is more helpful in mechanising explosives and advanced ammunitions which are more helpful for easy destruction of humankind.

Religion Without Sacrifice :

The philosophy of any religion is "be good and do good".

The spirt and ideologies of the Vedas, the Koran and the Bible are "oneness of all". Ramakrishna Paramahamsa had rightly remarked that "Religion is not for the empty stomachs".

Swami Vivekananda anticipated the creation of a new India with Vedantic brain and Moslem body, but the same was not acted upon. All religions preach 'sacrifice'. The height of charity is sacrifice. Charity comes out of kindness. Kindness results in identifying with others' sufferings and that is the act of selflessness. Self-centeredness is omnipresent which hinders the element of sacrifice. People are sacrificing the ideologies of their religions to overpower other religions.

Politics Without Principle :

"Groups, factions, parties and individuals hungry for power and anxious to rule over the people are found in abundance everywhere."

Bapu, the above comment was passed in the 1950's by Shri Meharchand Mahajan, a renowned jurist. You can assess the plight of the present political situation. A majority of political leaders are leading their political career with a moral turpitude. They are more conscious in keeping their political base firm than in promoting the welfare of the common man.

A criminal, winning an election by fair or foul means, goes to the extent of substantiating his innocence by the public mandate he obtained. Every political leader, desiring a berth in the cabinet, makes hectic political moves to achieve the same.

If he fails in that mission, he makes no bones to quit the party and rejoin the same on getting some assurance from the high command without qualms of conscience. Politics without principle is now the principle of politics.

Bapu, you fought for India, but you are being revered outside India. You might not have even dreamt of this sort of a society. Bapu, to reform and refurbish this decomposed society don't rise from your ashes expecting a red carpet welcome from brother Indians for whose liberty you shed the last drop of your blood.

These people don't want you in flesh and blood. They only want their personal prosperity by using your name and fame. Thank your stars that we are remembering and paying tributes to you twice a year.

Bapu, how lucky you are!

(33)

Patel Jayanti - 31st Oct.

Sardar Vallabhbhai Patel

The Architect of the Intergration of India

- Atam Dev

"That there is today an India to think and talk about is very largely due to Sardar Patel's statesmanship and his firm administration."

-Dr. Rajendra Prasad.

Sardar Vallabhbhai Patel, the Iron Man of India was born on 31st October, 1875, in a small village in Nadiad, Gujarat. His father Jhaverbhai was a simple farmer who had served in the army of Jhansi Ki Rani. After passing his matriculation examination and law examination, he started practising as a lawyer in Godhara.

He was married to Jhaverba. In 1904, he was blessed with a daughter and in 1905, by a son Dayabhai. In 1909 his wife became seriously ill and was taken to Bombay for treatment. But Vallabhbhai had to return to Godhra for hearing of an urgent case. When he was pleading the case in the court, a telegram was delivered to him. He read and kept it in the pocket and continued the argument. When the hearing was over, he told people that his wife had died. Such was the patience and iron will of Sardar Patel.

In 1910 he went to England, became a barrister and returned to India in 1913. He started his practice in Ahmedabad and soon became a famous lawyer.

In 1918, there was a drought in Kheda division of Gujarat. Farmers asked for relief from the high rate of taxes but the British Government refused. Gandhi Ji took up the peasent, cause but could not devote his full time. At this point Sardar Vallabhbhai Patel came forward, gave up his lucrative pradice and successfully led the peasents revolt. The revot ended in 1919 and the government suspended the collection of revenue and rolled back the rates. Kheda satyagrah turned Vallabhbhai into a national hero.

From then onwards Sardar threw himself fully in Mahatma Gandhi's non-cooperation movement, gave up English clothes and

started wearing khadi. He was elected Ahmedabad's municipal president in 1922, 1924 and 1927 and was also Gujarat Congress president for two years.

In 1928, Bardoli Taluka in Gujarat suffered from floods and famine. The government, intsead of helping the farmars, raised the rate of revenue taxes by 30%. Sardar Patel wrote to the governor to reduce the taxes but the Governor rejected the demand. The farmers, under the leadership of Patel, refused to pay a single paisa. The government announced the date of collection of taxes and started confiscating and auctioning the farmers' properties but nobody came forward to buy the land. Ultmately, the government had to bow before Patel and had to suspend the tax collection orders. It was during the struggle and after the victory that his followers and colleagues began calling him Sardar.

Integration of Indian States - India attained Independence on 15th of Aug, 1947. Pandit Jawahar Lal Nehru became the first Prime Minister and Sardar Patel became the Deputy Prime Minister with the charge of Home Affrais, Information and Broadcasting and the Ministry of States.

There were 565 states in India and most of the Maharajas and Nawabs who ruled over them were rolling in wealth and power. They were dreaming of becoming independent rulers when the British quit India. Sardar Patel invoked their patriotism, coerced them and even threatened some of them to join in the nationonal task as responsible rulers and care about the future of their people. With great wisdom and foresight, he integrated all states except three. These three were Hyderabad, Junagarh and Jammu & Kashmir.

Nizam of Hyderabad and his military revolted. The revolt was put down under the command of Major General J.N. Chaudhary and the Nizam fell in line. Some force was also used in Junagarh and the Nawab fled to Pakistan with his family and dogs. Kashmir was invaded by Pakistan who occupied a part of it and Maharaja Hari Singh signed the Instrument of Accession. The Kashmir problem still remains unsolved.

With his iron will and determination Sardar Patel consolidated India. He united the scattered states with the Union of India without bloodshed. Patel got the title of Iron Man for his achivements.

Sardar Patel died of cardiac arrest on December 15, 1950.

He was conferred with Bharat Ratna posthumously in 1991.

Vision India by 2020

- A.P.J. Abdul Kalam

Former President of India

Vision India by 2020

1. A Nation where the rural and urban divide has reduced to a thin line.
2. A Nation where there is an equitable distribution and adequate access to energy and quality water.
3. A Nation where agriculture, industry and service sector work together in symphony.
4. A Nation where education with value system not denied to any meritorious condidate because of societal or economic discrimination.
5. A Nation, which is the best destination for the most talented scholars, scientists, and investors.
6. A Nation where the best of health care is available to all.
7. A Nation where the governance is responsive, transparent and corruption free.
8. A Nation where poverty has been totally eradicated, illiteracy removed and crimes against women and children are absent and none in the society feels alienated.
9. A Nation that is prosperous, heathy, secure, devoid of terrorism, peaceful and happy and continues with a sustainable growth plan.
10. A Nation that is one of the best places to live in and is proud of its leadership

Integrated Action for Developed India

To achieve the distinctive profile of India, we have the mission of transforming India into a developed nation. We have identified five areas where India has a core competence for integrated action: (1) Agriculture and food processing (2) Education and Healthcare (3) Information and Communication technology (4) Reliable and Quality Electric power, Surface transport and Infrastructure for all parts of the country (5) Self-reliance in critical technologies. These five areas are closely inter-related and in a coordinated way, leading to food, economic and national security.

PURA- Providing Urban Amenities in Rural Areas) is important for a nation which has 600,000 villages.

Sustained Development System-PURA

Now India turned 64 years old as the largest democracy in the world and we witness a defining period for the nation and its people. We stand 9 years away from the goal of achieving the vision for a developed India and there has been significant progress in all directions. Each step we take in evolution of sustainable systems which act as "enablers" and bring inclusive growth and integrated development to the nation. One such sustainable development system is the mission of Provision of Urban Amenities in Rural Areas (PURA). It means that:

1. The villages must be connected within themselves and main towns and metros through good roads and wherever needed by railway lines. They must have other infrastructure like schools, colleges, hospitals and amenities for the local population and the visitors. This is physical connectivity.
2. In the emerging knowledge era, the native knowledge has to be preserved and enhanced with latest tools of technology, training and research. The villages have to have access to good education from best teachers wherever they are, must have the benefit of good medical treatment, and must have latest information on their pursuits like agriculture, fishery, horticulture and food processing. That means they have to have electronic connectivity.

3. Once the Physical and Electronic connectivity are enabled, the knowledge connectivity is enabled. That can facilitate the ability to increase the productivity, the utilization of spare time, awareness of health welfare, ensuring a market for products, increasing quality conscience, interacting with partners, getting best equipment, increasing transparency and so in general knowledge connectivity.
4. Once the three connectivities viz Physical, Electronic and Knowledge connectivity are ensured, they facilitate earning capacity leading to economic connectivity. When we Provide Urban Amenities to Rural Areas (PURA), we can lead to upliftment of rural areas, we can attract investors, we can introduce effectively useful systems like Rural BPOs, Micro Finance etc.

The number of PURA for the whole country is estimated to be 7000 covering 600,000 villages where 700 million people live. There are a number of operational PURA in our country initiated by many educational, healthcare institutions, industry and othe institutions. Government of India is already moving ahead with the implementation of PURA on the national scale across several districts of India.

Next generation of entrepreneurs.

India has the resources, both natural and human capital. Presently our university education system is contributing 3 million graduates and post graduates every year and the students seeking employment after completion of 10th Class and 10+2 class are around 7 million per year. Thus nearly 10 million youth are injected into the employment maket every year. In the 21st century, India needs large number of talented youth with higher education for the task of knowledge acquisition, knowledge imparting, knowledge creation and knowledge sharing. There is a large gap in the availability of employable skill. How to bridge this gap is the question and also the challenge is how to make many of them as employment generator rathers than employment seekers.

In the knowledge economy the objective of a society changes from fulfilling the basic needs of development to that of empowerment. The education system will be promoted by creative, interactive self learning-formal and informal education with focus on values, merit and quality. The workers instead of being skilled or semi-skilled will be knowledgeable, self-empowerd and flexibly skilled. The type of work instead of being structured and hardware driven will be less structured and software driven.

Creation of enterprises, development of skilled workforce and evolution of knowledge would certainly lead to prosperity. However, attainment of prosperity will be effective only if we are also able to evolve products and systems which are sustainable.

With 550 million youth, a growing economy, intensifying technology and developments in communication and transport, India is poised for a surging growth led by the next generation entrepreneurs. These enterprises would be identified by their competence, skill and high technology products and services. They would be hallmarks of quality with cost effectiveness and efficiency with continuous improvement.

I was recently going through an article in the Economist, which talked about the growing strength of Indian workforce. The article says that, in the next ten years, out of every ten new workers around the world, three would be Indians. This workforce will be spread across different sectors of the economy and involved in a variety of services. With this huge workforce in making, it is imperative for us to evolve strategies on how best to equip them with global standard skill sets. When we discuss on the next geneation of enterprises, the aspect of building a futuristic workforce needs consideration.

❑

(36)

Between The Two Independence Days.

- Jagmohan

Former Governor of J. & K.

Last year, on August 15, the Asian age published an article of mine under the title: Did India Awake? In this article, I had referred to Jawaharlal Nehru's historic speech, delivered at mid-night of August 14-15, 1947 in which he had declared: "When the world sleeps, India would awake to light and freedom". Around this poetic expression. I had built up a proposition that India had indisputably woken up but had started walking on an uneven and uncertain path. Today, when I look at the period intervening between the last Independence day and this year's, I find that her path has become far more uneven and uncertain and she has started tumbling over and hurting herself badly.

It is during this period that India has seen its worst cases of 'scams, scandals and swindling', such as those pertaining to the Commonwealth Games, 2G Specturm and Bellary Mines. These cases have no parallel in scale or depth or sheer brazen-ness. They have caused extensive damage to the country's prestige and honour.

Take, for instance, the case of Commonwealth Games (October 2010). The main objective of bringing these Games to India was to enhance its standing among the comity of nations and to make it a more attractive centre for foreign investment, besides providing a long-term boost to tourism. But what has happened? After spending over Rs. 18,000 crore of common man's tax-payer money, all that we have got is a plethora of cases of corruption which have badly sullied the country's image. Instead of yielding benefits to us is has undermined whatever favourable position India earlier had in the arena of foreign direct investment.

The inquiries and the court proceedings with regard to these cases that are presently going on, with all the clap-trap of publicity, are not allowing the unedifying image of India to fade away. No wonder, of late, foreign direct investment in India, as indicated in the World Investment Report, 2011, has sharply declined; in contrast, it has increased in China, Singapore, Indonesia. In the uncongenial environment that have recently emerged, India is bound to be bypassed by big foreign investors. Even the giant and reputed business houses of India now find it more expedient to invest abroad than in India.

In the period between August 15, 2010 and August 15, 2011, three notable judgements were delivered by the Supreme Court. One relates to the Chattisgarh Salwa Judum case (July 5, 2011), the second to the case of sewerage workers of the Delhi Jal Board (July 12, 2011) and the third (July 4, 2011) to the writ petition filed by Ram Jethmalani and others for the recovery of black money stashed abroad. In all these cases, the Supreme Court has, in its own way, pointed its fingers towards some of the deep and dangerous potholes that exist on the path on which India is currently walking. In the Salwa Judum case, it has shown how the culture of unrestrained selfishness and greed spawned by neo-liberal economic policy of the State is largely responsible for the Naxal/Maoist violence and how the 'amoral political economy', coupled with the scant respect shown to 'the vision and values of Indian constitutionalism', has virtually created a 'heart of darkness' in the tribal belt of Chattisgarh. With the same insight, the Court, in the Delhi Jal Board case, has shown how insensitive has generally become the state-apparatus and how, even in the capital of the country, the sewerage workers suffer 'high morbidity and mortality' on account of the apathy of those whose duty it is to supply protective 'gears' to them. In Ram Jethmalani case, by constituting 'special investigative team', under the chairmanship of Justice (Rtd.) Jeevan Reddy, to investigate and initiate prosecution against the holders of illegal deposits in foreign banks, the Supreme Court has left no one in doubt what it thinks about the growing incapacity of the normal governance machinery to tackle the vested interests and solve serious problems confronting the country. It is this incapacity which has

enabled the tax evaders to stash abroad amounts which, according to the Global Financial Integrity Report, are as huge as huge as $1.4 trillion (Rs. 70 lakh crore)

The period also shows further decline in the implementational capacity of various institutions of governance. The latest reports of the Ministries and field organisations reveal that in 2011, the 'completion-delays' are likely to cost the public exchequer additional Rs. 1,20,627 crore, and that the biggest casualty would be the key infra-structural projects pertaining to Highways, Power and Petroleum. What is worse, the old attitudes and procedures of disposing of government work persist. The 2011 report of the IFC/ World Bank on "Ease of Doing Business' had ranked India low, at 134th position in the list of 183 countries surveyed. In enforcing contracts, its rank is as low as 182, and in securing a construction permit its position 177 is no better.

After the grim and gory tragedy enacted by the terrorists in Mumbai on November 26-28, 2008, which resulted in death of about 170 innocent persons and which showed the overall security apparatus of the country in a very poor light, solemn assurances were held out to the public by the central and state governments that counter-terrorism-machinery would be effectively strengthened. Massive resources were made available for setting up a National Investigating Agency and a National Intellegence Grid and also for upgrading equipment and operational skills of the police personnel. And yet, on July 13, the terrorists were able to carry out serial bomb blasts in the heart of Mumbai with ease and confidence. The response of the local authorities was also as fiful as at the time of similar incidents in the past.

What is no less unfortunate, neither the case of July 13 nor about that a dozen other terrorism related cases that have occurred since August 15, 2010 have been fully worked out. In the meanwhile, the Indian Mujahideens, which is now virtually functioning as an adjunct of the Lashkar-e-Taiba of Pakistan, is silently enlisting new recruits and motivating them to carry out terrorist acts in India.

Not very different is the position with regard to the challenges posed by the Left-Wing Extremism. Despite adoption of multipronged

approach, these challenges have mounted. Last year, according to the report of the Ministry of Home Affairs, the Naxalites/Maoists killed 1003 persons as compared to 908 put to death by them in 2009 and 721 in 2008. Ominously, they are now working on a new strategy to infiltrate into urban areas. Their aim is to tap the disgruntled workers in the informal sector, build a cadre of urban guerrillas and use its members not only for setting up centres of activity in the cities but also for establishing supply lines of arms and ammunitions to the rural areas.

In the economic sphere, too, the sign-posts do not point to an elevating path ahead. The prices of essential commodities have arisen sharply. The much adumbrated inclusive growth has remained on the paper. The number of dollar billionaires has increased to 69. They together hold wealth equivalent to one-third of GDP, while about 800 million Indians live on less than Rs. 20 per day. Hardly any housing is being provided to the urban poor. Today, there are many more slums in our metropolitan cities than they were at the time of last Independence Day.

There may have been a few bright spots here and there. But the overall journey of the nation, during the year in question, has been extremely hazardous. Is it not time that all right thinking people of India should get together, ponder over the numerous disabilities that the country has contracted while traversing the wrong path, and carve out a safer, surer and smoother course for the future? **History tells us in no uncertain terms that those who do not care to see the warning signals of the gethering storm are soon engulfed and destroyed by it.**

❑

Society depends more on its citizen's character than its intelligence.

Status of Women - A reflection of the Society's Progress

- S. N. Jain

It has been proved time and again that the status of women in a society is the key indicator of the progress of the society. The importance of women in bringing about a cultural change cannot be understimated. Therefore it is an urgent need of today to work towards restoring dignity and empowering women.

On studying this topic in depth one realizes that the history points to a similar conclusion regarding women's role in the progress of society. In ancient ages women enjoyed the same status as men in all walks of life. The religious scriptures, texts, liteature speak of unique status of women in family life and society. The history of India is rich with achievements of women and the equality of status in this era. However in the middle ages the position of women lowered substantially. Men were considered superior to women. And this decline in woman's status in society was largely responsible for practices which still prevail and are a major deterrent for the progress of a society. Practices such as child marriage, shunning widow remarriage, pitiable plight of widows, polygamy, and sati reduced women to a status of dependence.

In moderen times we are seeing the situation has started to change favourably but it varies considerably depending on the socio-economic background, entrenched social customs and practices. And even for those who have taken the stride it has been a journey of long struggle and sacrifices. The changes in the legislation and legal system in the fields such as right to education, property inheritance, remarriage, rights, equal opportunity in employment, participation in political system have helped in encouraging women to stand up for their rights. And it is indeed very encouraging to see many women who have excelled with sheer grit, personal drive, despite several roadblocks in politics, judiciary, civil services, academics, medicines, business, police, military and many

traditionally male dominated professions and are occupying positions of eminence.

While trying to understand this situation some of the areas that have been troubling are-dual role and personality in society: Women ae expected to be self-reliant, socially active, earning person and at same time be a traditional home-maker. Money earned goes to family kitty with no exclusive control of hers. But she is solely responsible for the household work with minimal help from the other family members.

Dowry system and the vulgar display of wealth at the wedding ceremonies in affluent families is becoming 'one-upmanship' with people trying to outdo each other. Other families, at great cost, join the crowd for their 'face' in the society ending up in financial crisis. The women of families who cannot meet the expectation of the groom and his family end up facing harassment, physical abuse and sometimes even death at the hands of such greedy people.

The other most disturbing factor is that of female foeticide. The societal pressure influences people in their desire for the male offspring. This leads to the practice of female foeticide and the neglect of girl child which tantamount to murder and is disturbing the nature's male to female population ratio.

Nutrition and literacy of girls: In economically struggling societies the education and the nutrition of the girl child receives a lower priority than that of boys. And this lack of education and economic dependence makes the society's progress more difficult.

Ill-treatment of widows (conservative sections): They are considered curse on family, segregated, provided meagre food, clothing and sent to widow homes, living secluded life.

At the moment, there is an urgent need for improvement in the overall women's well being irrespective of social and economic background. There is a sea of work that needs to be done to change the deeply entrenched societal outlook. And it will require major contribution from all the pillars of the society. The Government,

Judiciary, Corporates, NGO's will all have to contribute effectively in achieving this goal.

Media: The media can contribute a lot to the society by changing opinions and constructively educating the people for betterment of the society. The responsible media should come forward as a catalyst for change, instead of sticking to conservative traditional themes and programmes.

Spiritual leaders: They have an ability to connect with mass of people and guide them to live a purposeful life. They can influence the society and help the eradication of social evils.

NGO's: They can play a crucial role by adopting social change programmes as they have a reach across all sections of society. Example: Bharat Vikas Parishad with its 1,200 branches and 80,000 members spread all over India can be a fomidable partner in this journey.

Education curriculum: Education and discipline create a responsible society. The schools, colleges, universities as they connect with children, teenagers, and adults can be agents for moulding their attitude, values and ethos, apart from teaching the prescribed syllabus.

Corporates: The progressive corporate agencies can connect with the community by engaging in social causes. They can help in encouraging women and empowering them by providing equal opportunities for them to shine and be successful.

Leadership at grassroots: The local leaders and others resist social changes in their constituency. At times they are ruthless, leading to 'honour killings', expelling young ones and their families from the community life. They should be pragmatic, progressive and not rigid.

A woman should always challange our respect, and never move our compassion.

Managing the Country

- Dr. Karan Singh

Dr. Karan Singh is a member of Rajya Sabha and also chairman of ICCR. He delivered a lecture on management in the 22nd Annual Management Convention. Here are some abstracts from the long lecture.

MANAGING OUR POLITICAL SYSTEM. The political system particularly in democracy has a tremendous impact on how the country develops. Despite the generally poor opinion which people seem to have about politicians and somewhat dismissive attitude that people take towards Parliament, The general tendency in our country is to run down politics and politicians. It is unfortunate because that really in a way dilutes the whole impact. Managing politics is a huge task. Our general election is the largest management challenge. The fact remains that we have got 15 elections in Lok Sabha and dozens and dozens of other elections show that we have been able to manage our electoral system. However, there are shortcomings and there are many new steps that can be taken and compulsory voting was one of them. Since we have less than 50% voting record in our country unless we make voting compulsory people are not going to vote. The second suggestion is that after the election we should have a run off between top two candidates.

The management people should apply their minds. Running the Government of India is a huge task and each ministry in Government is equal to a huge corpoation. How to build in management skills into the running of Government of India and the State Government particulaly are the questions that have to be asked and to be answered?

Managing the Economy

The second challenge is managing the economy. "Now we all have experienced the reality of the melt down in the West where

ROBUST CAPITALISM has at last met its meniscus. They are especially explaitative organizations unless you manage them properly. How can you have great firms, the auditor firms and banks suddenly collapsing before you because of mismanagement, because of corruption? Everybody talks about corruption in India. What about corruption in America. Billions of dollars have been siphoned off there. People have looted literally the common man that's why people could not be paid more wages and many were out on streets. Therefore, you have to manage the economy is such a way that both public and private sectors are able to work in tandem. We were able to sustain ourselves because we did have strong public sector. We were able to regulate to a considerable extent when this market melt down happened. Therefore let us not be led away by western models. Let us see what the model that India needs is. We need strong private sector, certainly a growing private sector. We also need a strong public sector and both are in the need to be properly managed for managing economy.

Managing Environment

Third area is managing the environment, which has now become an extremely significant basis of the world economy. We have to manage our own environment for our own interest, as we are not doing anybody a favor by managing it. We are doing ourselves a favor, we are doing our children and grandchildren a favor and this is also a management problem. How to manage carbon emissions? How do you manage your energy possibility and challenges? What do you do with nuclear energy, what do you do with solar energy, what do you do with wind energy and alternative energy sources and how do you reduce the disaster consequences? Why can some innovative thinking not be done with regard to what we can do to our environement? So a balance between development and environment is extremely important, where a great deal of management expertise is required. Some special courses in environmental management are necessary because it has become very specialized area of our public life.

Managing Society

The fourth dimension is managing society. Our society is becoming disrupted and extremely volatile. For that 3C's are

responsible, CORRUPTION, COMMMUNALISM and CASTEISM. These three C's have distorted our society. Joint family has disappeared, we have moved to single parent family. What are KHAP PANCHAYATS, who give people the right to kill young people and throw them into the river? Should extra constitutional killings not be brought to book? Where is social conscience? Who is interested in social welfare? Swami Vivekananda, founder of Ramakrishna Mission gave a single motto: work not only for salvation of your soul but also for the welfare of the society. We are not getting results correctly because of corruption that has seeped into our system. It has destroyed our quality, destroyed our society, and destroyed our economy. Unless managers are aware very clearly what needs to be done to prevent this, we shall not be able to manage the society.

Managing Self

Lastly we have to manage our sprit. This human body of ours encapsulates a spark of divine "*Ishwara sarva bhutanam hrideshe arjuna tishtati*" Lord resides in the hearts of all beings "*brahmayan sarva bhutani yantra rudhani mayaya*" the divine pervades all the entire universe including our self. Do we open the doors of perception to young people? Management is much more than any business school where beside learning the political economy, environment, society you learn yourself and your students. If you do that then you will really be fulfilling your responsibility. You are leaders, you are models for students and I want to sum up the essential qualities for leadership. We need to have vision that doesn't look only for the present but that looks for into future and sees India as a great power in a great global society. A voice that touches the heart, a personality suffused with compassion these alone are requirements of the leaders and if you are leaders then you develop these qualities.

❑

Are Our Cities Livable and Harmonious?

- Dr. Manu N Kulkarni

With rising urbanisation, the 21st century is going to be the urban century where cities become the centres of both prosperity and squalour, and the goverance of cities become more critical than the goverance of the State. Cities occupy only 2% of the worlds land, but consume 75% of its resources. Cities produce close to 80% of all carbondioxide! How do we make them livable and harmonious? How do we make them fit for all generations-the young and the old? How do we tackle slums and integrate the city spectrum? What are those Global City Indicators which can be used with understanding by the city Mayors and Managers? How do we tackle the complexities of land ownership and enhance market to deliver low income housing solutions? These were some of the burning issues passionately debated by thousands of participants like this author from all over the world in the World Urban Forum-4 organised by the UN-Habitat and hosted by the Nanjing City Government in China. My attendance was on behalf of the Institute of Social Sciences, New Delhi.

The Asian Development Bank which released its flagship report in the conference on "Managing Asian Cities", says that "large cities are more productive than smaller ones and labour productivity generally increases with city size". Another emerging trend is to merge growing small cities by forming them into mega cities on a scale never seen before-for example, Tokyo-Nagoya-Osaka-Kyoto-Kobe which is likely to have 60 million people by 2015. By 2010 the population of Hongkong-Shenzen-Guangdong mega region could reach 120 million. But these regional tube-like cities need to develop complex systems of coordination of water, transport, communications and infrastructure. Can we develop Tumkur-Bengaluru-Mysore as one mega city region?

Need of a Universal Design

European Countries like Sweden do not like to build big cities and they want towns to come up instead of mega-cities with all the attendant problems of transport and traffic. Swedes want a **Healed Town-a town for everyone**. Everybody should benefit-young, old, the strong, the weak, women, men and children, healthy and sick. Urban Citizens have verying requirements and the same person can require different types of town or urban space during different stages in life, or lifestyles, or values and travel patterns like the cyclists, disabled and those who walk differently. The Swedish experience tells that it is not sustainable to impose an identical pattern on all towns and cities in a country, because each of them is unique with differing needs and dreams. Cities cannot be harmonious for all unless they adopt what the Norwegian Government calls the Universal Design principle in developing the cities. "Universal design is the design of products and environment ***to be usable by all people*** to the greatest extent possible without the need for adaptation or specialised design."

Design is a common term for all work processes involved in the shaping of the physical world, encompassing community planning, land use, architecture, construction activity, product development and more. Can our cities like New Delhi and Mumbai, Bengaluru and Kolkata emulate any of these global city styles? Cities like New York and London have effective Mayors and hence they are able to make a difference. Where are the Mayors of Mumbai, Bengaluru and Kolkata? Government bureaucrats aided by crony ministers manage these cities, and no wonder when terrorists hit Mumbai on 26/11, there was no Mayor to come to the rescue of the victims unlike Mayor Rudolph Giuliani of New York who did a remarkable job in helping the victims of 9/11 in New York. Little attention has been paid to the regional and local governmance in the development policy of most donor countries, even though strong local government authorities or Municipalities are essential for sustainable development.

Today's urban planning is not just about physical planning of the cities or towns, but it is all about cross-sectoral integration, coordination between different management levels, and active

participation by the local population and interest groups, particularly the informal settlement groups like the slum population surrounding most of the cities. Globally speaking, cities cover only 3% of land altogether, but they leave large ecological footprints. At the same time, human habitats in cities, if properly planned, can relieve the pressure on the same ecosystems. This has been called urban sustainability multiplier, which refers to the process by which high urban sustainability significantly shrinks per capita ecological footprints by reducing energy and material needs. **For example, multiple family dwellings reduce the per capita consumption of building materials and services infrastructure. To get this multiplier, we need strong urban local governments and not Urban Ministries.**

Elder's day, Ist October

Healthy, Wealthy and Wise in Old Age

It is important to maintain good health in old age to enjoy life. So just follow these guidelines to keep yourself fit and fine :

- ★ Minimum eight hours of sound sleep at night.
- ★ Adequate quantity of water everyday.
- ★ Reduce food intake by half, compared to what you were having in younger age.
- ★ Think positive, and maintain tranquility during adversities.
- ★ Avoid too much salt, sugar and oily food.
- ★ Keep yourself fully occupied in work you like and enjoy.
- ★ Walk at least two miles or more, before sunrise or after sunset.
- ★ Lower the waist line, longer the life line.
- ★ Devote your time to reading good books.
- ★ Never enter into controversial arguments with anyone.
- ★ Be sincere and faithful to fellow beings.
- ★ Try to lead a selfless life and do Sewa.
- ★ Above all, be a noble human being.

If you follow these principles of life, you can bid goodbye to medicines.

A New Start

- Joginder Singh IPS (Retd.)

The writer is a former director of CBI

We all face, different and sometimes totally depressing circumstances, in our lives. What separates the victor, from the shattered and defeated is, how he responds to each new distortion, brought about by the fate, in a completely unexpected scenario. If you want to be successful, you should always be striving, to transform your expectations into a concrete effect. You should have a self prescribed schedule to fulfill your dream. Progress gets discontinued, when you face, an appalling state of affairs.

> We should spend more time doing what we love and a smaller or if possible, no time, doing we dislike and detest. This is relevant to our work, or study or our personal life. This is the only way, to increase your efficiency and have more time, for yourself.

Everything we do, in different areas of our life, whether working, or resting or exercising, is aimed at enhancing the quality of our life, We all aspire for harmonious and happy relationships, in our work place, home, and community we live, with our bosses and our colleagues. We all feel like to be considered important, with a definite and an important role in our work. Honestly, the best times of our lives are, when we are utterly and absolutely immersed and passionate about our work.

But for doing this, we have to devise steps, to make our work intersting and challenging. We should strive to enjoy our occupation or profession. Without financial independence, and worries about money, we cannot really be happy. A certain level of financial independence, is essential, for our comfort and the living style. The answer to this, lies in saving and investing regularly throughout our working life, so that we can ensure, a well-off existence for ourselves. All our work and habits, are generally meant, to make our life joyful.

Unless we have good health, and are free from pain and illness, we cannot have a feeling of well being. We need to have, a continuous flow of energy and a feelings of being on the top, of the world, to give our best. Health is central to our life, though many, take it for granted until something goes wrong with their bodies. Exercising and keeping fit, should be made, as much a part of our life, as our eating and breathing.

Fear is a sinister germ, which, if allowed to breed, in our minds, will eat away our courage and fortitude. It blocks our forward journey to our chosen destination and thwarts our endeavours. Our approach should be less or no fretting and concentrating more on fixing adverse situations. Worry, Anxiety, Ambiguity and Scepticism, will invariably deprive us of dreams and a pleasant future, if we allow them space in our lives and thinking. Of course, they are present at every step in our life, but our effort should be, to deal with them with a view to conquer them. This is the only way to move in the direction of your aims and ambitions.

We daily need, to renew the fire and energy of our life for our goals. What we require most, is persistence, for pursuing our goals. President Calvin Coolidge once said, that nothing could take the place of persistence and added "Persistence and determination alone are omnipotent." Perseverance and determination, can overcome lack of education, money, talent, intelligence, looks and all other apparent disadvantages. Nobody can reach his goals, without assiduousness. Persistence is the key to all success. Persistence is a state of mind. It can be developed and nurtured.

Before any success comes, in any person's life, he is bound to face temporary defeats and even failures. Most people quit, when defeat overtakes them. They feel, that it is the unproblematic, painless, trouble and most rational and reasonable thing which they should do. But most successful, have revealed, that their uppermost success came just a pace beyond the point, at which defeat has almost come about. It was just persistence, which took them to the greatest heights.

However, there is another quality, that is peace of mind, which is equally essential for success. If we are at peace with ourselves and the world, we will feel more and more relaxed, positive and optimistic. This, in turn, will lead to our feeling, less stressed, more healthy, both physically and in relationships with others, including your subordinates, fellow workers and your boss. With a greater, and overall peace of mind, we are likely, to focus more on our job.

Whatever we dwell upon, think about, becomes a reality in our life. The more attention we pay to any given area in our life better we will become in that. Bob Proctor edifies, on the Universal Law, called the Law of Gender as under; "This law decrees, that all seeds (ideas are spiritual seeds) have a gestation or incubation period before they manifest. In other words, when you choose a goal or build the image in your mind, a definite period of time must elapse before that image manifests in physical results." **If you want to be winner, you should take steps to put more positivity into play and take action to transform a gloomy and cynical situation into a powerful upbeat and optimistic situation.** ❑

Elder's Day 1st October

Quality of Life of Seniors

Being

Physical Being:

★ Being physically able to get around your home and neighbourhood.
★ Good nutrition and eating the right foods.

Psychological Being

★ Being able to have clear thoughts.
★ Coping with what life brings.

Spiritual Being

★ Feeling that your life is accomplishing something.
★ Participating in religious, spiritual and selfless service activities.

Belonging

Physical Belonging

★ Having a space for privacy.
★ Living in a place specially equipped for seniors.

Social Belonging

★ Being able to count on family members for help.
★ Having neighbours you can turn to.

Community Belonging

★ Being able to get medical services.
★ Going to places in your neighbourhood (stores, banks etc.).

Becoming

Practical Becoming

★ The caring you do for your spouse, grandchildren or other people.
★ Doing work around you home (cleaning, cooking, etc.).

Leisure Becoming

★ Having hobbies (gardening, knitting, painting etc.).
★ Participating in organised recreational activities.

Wikipedia

The New Know-It-All

- By Wynn Quon

It's as if a bunch of hardy human pyramid enthusiasts ended up erecting the tallest skyscraper in the world. That about describes the phenomenal success of Wikipedia, the free Internet Encyclopaedia. In 10 years since its birth, Wikipedia (www.wikipedia. org) has become the world's largest reference work. With 576,000 articles in English and 1.2 million more in nearly 160 other languages, it easily dwarfs the Encyclopaedia Britannica (120,000 articles in its online resources), the Encarta Reference Library (75,000 articles) and a half dozen other rivals. Not only that but Wikipedia is setting a blistering pace with more than a thousand new English-language articles being added each day.

Its success has attracted harsh criticism from predictable quarters. In an article published recently, Robert McHenry, former editor-in-chief of Encyclopaedia Britannica, disdainfully said that using Wikipedia was like visiting a public restroom.

McHenry's vain attempt to turn up the heat is ironic because it's the old-fangled encyclopaedia publishers who are on the hot seat. Wikipedia will put many of them in deep trouble within the next five years. Internet users have been voting with their clicks. Traffic to Wikipedia's 72 servers on any given day exceeds 80 million hits. Wikipedia articles are cited increasingly by mainstream newspapers and magazines. Encyclopaedia publishers lambast Wikipedia's reliability, but their outrage has blinded them to a sea change in their core market. The way people research and learn in the Internet age is vastly different from what it was only a decade ago, and if they fail to adapt, they will suffer.

It all started after Jimmy Wales, Wikipedia's co-founder and leader, began with a simple yet counterintuitive idea: create an open

encyclopaedia that anyone can contribute to. (The name Wikipedia comes from the "wiki" software-computerese for software that allows users to freely create and edit Web page content-that powers the website.) The project adopted a few canny rules of order: Whenever some-one edits an article, a new version of the article is created and saved. This is important because Wikipedia is an open-content project. Such projects are fuelled by the prestige and social standing derived by the contributors from the work that they do. Your contribution to an article, no matter how small, is kept for posterity and clearly identified as such. The continual creation of new versions also discourages antisocial behaviour-vandalized articles and be easily reverted. Each article also has a separate page where authors can discuss their changes and air their differences. To reduce bias, Wikipedia's policy is to present a neutral point of view that fairly represents all sides.

The effect of these simple rules has been extraordinary. **Wikipedia's first article was written in January 2001. With word-of-Net and favourable press coverage, ten thousand articles were added within nine months. that number grew tenfold by 2003 and tenfold yet again last year.** Despite such meteoric growth, Wikipedia has remained a nearly all-volunteer outfit, financed mostly by donations. More than 50,000 people have written or edited articles so far. Holding it all together is a hard-core group of 3,000 Wikipedians who make more than 100 article edits a month.

What of the critics? McHenry's distaste for Wikipedia goes back to first principles. He and others charge that it will never have the authority of a "proper" Encyclopaedia. While an old-style encyclopaedia has a minimum standard or grammer, readability and fact-checking, Wikipedia enforces none.

Wikipedians answer that although articles vary greatly in quality, they improve over time as contributors hone, polish and edit. Although it bothers traditionalists, the fact is a lack of standards doesn't prohibit excellence. Read, for example, Wikipedia's article on the Indian Ocean tsunami disaster (http://en.wikipedia.org/wiki/2004_Indian_Ocean_earthquake). It includes animations, geological information, figures on the international relief effort and a plethora

(45)

of external links to government geological websites as well as to videos and photographs of the catastrophe. It is one of the best, most up-to-date descriptions of the event available anywhere.

Criticism of Wikipedia harkens back to a time when people did their research in musty libraries. When information was hard to come by, an authoritative encyclopaedia was valuable because it saved you time and money.

But in the Internet age, you should research a topic not by getting the final word from a single source but by using a multitude of sources. You do this because the Net makes it easy. Googling takes just seconds.

But anyone who's tried googling a broad topic quickly runs into a frustrating problem: You end up with an over-whelming number of links, some of questionable relevance.

This is where Wikipedia comes in. Wikipedia complements Google by providing a framework of understanding, a quick overview of the subject. Its articles often provide a list of relevant links for further reference. If a date in a Wikipedia article is off by a few years, it is not an issue as long as the researcher knows that Wikipedia has no guarantee of accuracy. He should cross-check any critical pieces of information with other sources. Wikipedia is essential because it provides a starting point, an explorer's map to new territory rather than a faultless gazetteer.

The bad news for the traditional encyclopaedists is that this truf used to be theirs. There are three reasons why they've lost ground so quickly. One is that Wikipedia remains free. Traditional encyclopaedias require the purchase of an online subscription ($88 a year for Britannica and $100 for the Encarta Reference Library).

Another reason is that in a growing list of subjects, particularly in science, pop culture and current events, Wikipedia beats the traditional ency clopaedias hands down. Articles range from the ordinary to the playfully obscure. Want a quick summary of the original plot of the Hindi TV serial *Kyunki Saas Bhi Kabhi Bahu Thi*, or the episodes of the *The X-Files?* A discussion of the

mathematical Ackermann function or the cold-fusion controversy? Or how Irfan Pathan performed against Pakistan last year? Wikipedia's got it. A discourse on the use of the umlaut in heavy-metal-band names? Only in Wikipedia.

The third and perhaps the most challenging reason is what we can call the "leaching effect" (although traditional encyclopaedia publishers might spell it differently). **The expert who writes for the Encyclopaedia Britanica has probably spent decades studying his subject. He may have spent months crafting a definitive article. But after it's done, it takes only a few hours for an educated layperson to use that article along with other sources to come up with an adequate Wikipedia entry.** Before the days of the Internet, this entire dynamic would have been unthinkable.

Are traditional encyclopaedia publishers aware of Wikipedia's threat? Here's a clue: Try looking for the "Wikipedia" article in the online version of Britannica. You won't find it. Nor will you find it in any of the half dozen or so mainstream encyclopaedias currently on the market. These folks should be busy brainstorming a survival strategy. Instead, reaction has run in a comically limited range from denial to derision. Even Britannica, with its prestigious reputation, needs to figure out how it will thrive in what will increasingly be a Wikipedia world. **In the find analysis, Wikipedia is more than just the raising of a new pyramid. It's the tearing down of the old ones.**

(46)

They know enough who know how to learn.

इस अंक में.....

अपनी बात		1
Editor's Reflections		6
Holy Wisdom		8
कतिपय शाखाओं की असंतुलित कार्य प्रणाली	एस. के. वधवा	9
आधुनिकीकरण बनाम पाश्चात्यीकरण	सुरेश चन्द्र	10
पाश्चात्यीकरण के बिना आधुनिकीकरण	आर. के. श्रीवास्तव	17
Modernization Vs Westernization	O. P. Sexena	22
नाम में है राम की महिमा	राममनोहर लोहिया	27
विभिन्न रूप हैं दीपावली के	कृष्ण कुमार यादव	29
तंत्र नहीं लोक के नायक थे जे.पी.	राम शिव मूर्ति यादव	33
सरलता एवं सादगी की प्रतिमूर्तिः लालबहादुर शास्त्री	पं. लक्ष्मीशंकर व्यास	38
वैदिक वाङ्मय में स्वतन्त्रता की अवधारणा	डॉ. धर्मवीर सेठी	41
वैदिक जीवन दृष्टि	स्वामी प्रबोध चैतन्य	43
अपने समय के मालिक बनिए		47
भारतीय संस्कृति के अनुपम रत्न महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी	महेश चन्द्र शर्मा	51
भारत की 15वीं जनगणना : कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष	लीला विसारिया	51
ए०टी०एम० मशीन किसने बनाई?	डॉ. तासुम आरिफ	62
Bapu's Theory of Seven Sins	K.S.N. Murthy	63
Sardar Ballabhbhai Patel The Architect of the Intergration of India	Atam Dev	66
Vision India by 2020	A.P.J. Abdul Kalam	68
Between The Two Independence Days	Jagmohan	72
Status of Women - A Reflection of the Society's Progress	S. N. Jain	76
Managing the Country	Dr. Karan Singh	79
Are Our Cities Livable and Harmonious ?	Dr. Manu N Kulkarni	82
A New Start	Joginder Singh IPS (Retd.)	85
Wikipedia The New Know-It-All	By Wynn Quon	85